[2019] 12 एस. सी. आर 30

डॉ. अश्विनी कुमार

वी.

भारत और ए. एन. ए. आर. का संघ

(2018 का विविध आवेदन संख्या 2560)

में।

(2016 की लिखित याचिका (सिविल) संख्या 738)

सितंबर 05,2019

[रंजन गोगोई, सीजेआई, दिनेश माहेश्वरी और

संजीव खन्ना, जे. जे.]

अभिरक्षा यातनाएँ: प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण विधायी की मांग करते हुए संविधान के Art.32 के तहत दायर लिखित याचिका

यातना और अन्य क्रूरता, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार या सजा के खिलाफ कन्वेंशन पर आधारित ढांचा/कानून '

संयुक्त राष्ट्र महासभा की प्रार्थना द्वारा अपनाया गया

आवेदक यह था कि अभिरक्षा यातना मानवता के खिलाफ अपराध है जो सीधे Art.21 का उल्लंघन करता है, इस अदालत को कला के तहत अधिकार क्षेत्र का आह्वान और प्रयोग करना चाहिए। 141 , 142 मानव गरिमा की रक्षा और उन्नति के लिए, एक मूल और गैर-परक्राम्य संवैधानिक अधिकार-धारित: यह सच है कि कुछ असाधारण मामलों में जहां संस्थागत कारणों के बावजूद और

शक्ति का विभाजन, इस न्यायालय ने सामान्य नियम/दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं जब एक स्पष्ट, ठोस और सकल मानवाधिकार उल्लंघन हुआ है, जो किसी भी मानवाधिकार उल्लंघन से काफी अधिक भारी और बौना है। शक्तियों के पृथक्करण, विशेषज्ञता की कमी और परिणामों की अनिश्चितता के आधार पर चिंताओं को वैध बनाना-हालांकि, केवल मानवाधिकारों के उल्लंघन का आरोप या याचिका दायर करना।

पर्यावरण संबंधी चिंताएँ यह मानने के लिए एक उज्ज्वल रेखा नहीं हो सकती हैं कि आत्मसंयम से न्यायिक कानून को रास्ता मिलना चाहिए-न्यायालय द्वारा निर्देश कहाँ और कब जारी किए जाने चाहिए, ये सवाल और मुद्दे हैं।

संवैधानिक दुविधाओं को शामिल करना जो एक बड़ी बहस और चर्चा को अनिवार्य बनाता है-इस तरह के निर्देश बहुत सावधानी और सावधानी के साथ जारी किए जाने चाहिए और निश्चित रूप से तब नहीं जब

मामला पहले से ही कार्यपालिका या संसद के साथ विचार और बहस लंबित है-यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें कानून बनाने की आवश्यकता के लिए सुझाव देने के लिए अदालत के हस्तक्षेप की आवश्यकता हो क्योंकि मामला पहले से ही सक्रिय है।

30 डॉ. अश्विनी कुमार बनाम। भारत और ए. एन. ओ. एच. का संघ

विचार-इस स्तर पर किसी भी दिशा की व्याख्या की जाएगी।

कानून के अधिनियमन में न्यायिक भागीदारी-जब मैट पहले से ही विचाराधीन है और इसकी जांच की जा रही है

विधान के उद्देश्य से, यह इस न्यायालय के लिए उचित नहीं होगा

अपनी राय को लागू करना, चाहे वह किसी निर्देश के रूप में हो या यहां तक कि इसके लिए एक अनुरोध स्पष्ट रूप से कमजोर करेगा और निर्धारित भूमिका के साथ संघर्ष करेगा।

संविधान के तहत न्यायपालिका को-कोई निर्देश नहीं दिया जा सकता है

के अनुरूप कानून बनाने के लिए निर्देश जारी करने की राशि भारत का संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन संविधान-कला। 21 , 32 , 141 , 142

उच्चतम न्यायालय कर्मचारी कल्याण संघ बनाम। भारत संघ और एक अन्य (1989) 4 एस. सी. सी. 187: [1989] 3 एससीआर 488; वी. के. नसवा बनाम गृह सचिव, भारत संघ और अन्य (2012) 2 एससीसी 542: [2012] 2 एस. सी. आर. 912; हिमाचल प्रदेश राज्य और अन्य बनाम। सतपाल सैनी (2017) 11 एससीसी 42: [2017] 1 एस. सी. आर. 658 पर भरोसा किया।

भारत संघ और एक अन्य v. आजादी बचाओ आंदोलन और एक और (2004) 10 एससीसी 1: [2003] 4 पूरक। एस. सी. आर. 222; रोज़िलिन जॉर्ज बनाम। भारत संघ और अन्य

(1994) 2 एससीसी 80: [1993] 3 पूरक। एस. सी. आर. 141; साक्षी बनाम। भारत संघ और अन्य (2004) 5 एस. सी. सी. 518: [2004] 2 पूरक। एससीआर 723; पी. बी. सामंत और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य ए. आई. आर. 1994 बम 323; शीला बारसे बनाम महाराष्ट्र राज्य (1983) 2 एस. सी. सी. 96: [1983] 2 एस. सी. आर. 337; मध्य प्रदेश राज्य बनाम श्यामसुंदर त्रिवेदी और अन्य (1995) 4 एससीसी 262: [1995] 1 पूरक। एस. सी. आर. 44; नीलाबती बेहरा (श्रीमती) उर्फ ललिता बेहरा (के माध्यम से)

उच्चतम न्यायालय कानूनी सहायता समिति) v. उड़ीसा राज्य और अन्य (1993) 2 एस. सी. सी. 746: [1993] 2 एससीआर 581; पृथ्वीपाल सिंह और अन्य बनाम। पंजाब राज्य और एक अन्य (2012) 1 एस. सी. सी. 10: [2012] 14 एस. सी. आर. 862; एस. नांबी नारायणन बनाम। सिबी मैथ्यूज और अन्य (2018)

10 एससीसी 804: [2018] 12 एस. सी. आर. 51-संदर्भित।

रेजिना (कंट्रीसाइड एलायंस) और अन्य बनाम। महान्यायवादी और एक अन्य (2008) 1 एसी 719-संदर्भित।

भारत का संविधान: शक्तियों का पृथक्करण-भारत में

लिखित संविधान जो सर्वोच्च है और वेल [2019] 12 एस. सी. आर. के रूप में लिखा गया है।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

राज्य की तीन शाखाओं की शक्तियों, भूमिकाओं और कार्यों को विभाजित करता है -

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका-ये विभाग

जाँचने के लिए संविधान द्वारा निर्धारित सीमाएँ और सीमाएँ हैं

तीन शाखाओं में से किसी एक द्वारा दूसरी शाखा के अधिकार क्षेत्र में आने वाली शक्तियों, कार्यों और कार्यों में अतिक्रमण को रोकना-तीन शाखाओं को संवैधानिक विभाजन का सम्मान करना होगा और दोनों के बीच भूमिकाओं और कार्यों के आवंटन में बाधा नहीं डालनी होगी।

और कार्य एक रक्षक है और शक्ति के संभावित दुरुपयोग के खिलाफ जाँच करता है और कानून का शासन तब सुरक्षित होता है जब प्रत्येक शाखा का निरीक्षण किया जाता है उनकी शक्तियों, कार्यों और भूमिकाओं के लिए संवैधानिक सीमाएँ -

शक्तियों के पृथक्करण का आधुनिक सिद्धांत यह स्वीकार नहीं करता है कि तीनों शाखाएं पारस्परिक रूप से अलग-थलग भूमिकाएं और कार्य करती हैं और

अच्छे के लिए समन्वित संस्थागत प्रयास की आवश्यकता को स्वीकार करता है

शासन, यद्यपि शक्ति विभाजन के लाभों पर जोर देता है और

तीनों अंगों को स्वीकार करके श्रम की अलग और विशिष्ट भूमिकाएँ और कार्य हैं जो संविधान द्वारा परिभाषित किए गए हैं-सभी संस्थानों को अपने अधिकार क्षेत्र के भीतर कार्य करना चाहिए न कि अतिक्रमण करना चाहिए।

अन्य के अधिकार क्षेत्र में-शक्तियों को अलग करके और

संस्थानों के कार्य, संविधान एक ऐसी संरचना सुनिश्चित करता है जहां संस्थान अपनी संस्थागत ताकत के अनुसार कार्य करते हैं।

भारत का संविधान: विधायिका की शक्तियाँ और कार्य

आयोजित किया गया: एक निर्वाचित और प्रतिनिधि निकाय के रूप में विधायिका लोगों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं को प्रभावी बनाने और उन्हें पूरा करने के लिए कानून बनाती है। विधायिका एक विचारशील और प्रतिनिधि निकाय के रूप में कार्य करती है। यह इस देश के मतदाताओं और नागरिकों के लिए सीधे तौर पर जवाबदेह और जवाबदेह है।

जवाबदेही वह है जो संसद या राज्य विधानसभाओं द्वारा बनाए गए विधानों और कानूनों को वैधता प्रदान करती है।

भारत का संविधानः कलाएँ। 73 और 162-कार्यपालिका की शक्तियाँ और कार्य-आयोजितः कार्यपालिका की प्राथमिक जिम्मेदारी है -

सरकारी नीतियों को तैयार करना और विधानों का प्रस्ताव करना जो

जब विधायिका द्वारा पारित किया जाता है तो कानून बन जाते हैं-कला के आधार पर। 73 और संविधान के 162, की शक्तियाँ और कार्य

कार्यपालिकाएँ व्यापक और विस्तृत होती हैं, क्योंकि वे मामलों को शामिल करती हैं।

जिनमें से संसद/राज्य विधायिका कानून बना सकती है और कार्यपालिका के पास उसके द्वारा प्रयोग किए जाने योग्य अधिकार और अधिकारिता निहित कर सकती है

भारत सरकार या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो-डी. आर.

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और ए. एन. ए. आर. का संघ

विधायी निकायों के प्रतिनिधि के रूप में और विधान की शर्तों के अधीन, कार्यपालिका दूसरे चरण के कानून बनाती है जिन्हें 'अधीनस्थ या प्रत्यायोजित कानून' के रूप में जाना जाता है-जिन क्षेत्रों में कोई कानून नहीं है, वहां कार्यपालिका के पास नीतियां, योजनाएं आदि बनाने की शक्ति होती है, जो संसद या राज्य विधायिका की कानून बनाने की शक्ति के साथ-साथ व्यापक होती है-साथ ही, राजनीतिक कार्यपालिका विधायिका के प्रति जवाबदेह होती है और तब तक पद धारण करती है जब तक कि उन्हें कानून बनाने का अधिकार प्राप्त न हो।

विधायिका का समर्थन और विश्वास-इस प्रकार, है

विधायिका और कार्यपालिका के कार्मिकों/सदस्यों की परस्पर निर्भरता, अंतःक्रिया और यहां तक कि समानता-इसलिए कार्यपालिका बहु-कार्यात्मक भूमिका निभाती है और यह अखंड नहीं है।

भारत का संविधानः न्यायपालिका की भूमिका-विधायिका के सदस्यों के विपरीत न्यायाधीश किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं।

यहां तक कि नागरिक भी-न्यायाधीश जवाबदेह और जवाबदेह नहीं होते हैं क्योंकि राजनीतिक कार्यपालिका विधायिका और निर्वाचित लोगों के प्रति होती है।

प्रतिनिधि मतदाताओं के लिए होते हैं-यह स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि न्यायाधीश बिना किसी दबाव और पक्षपात के निष्पक्ष और समान तरीके से न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए संविधान की सर्वोच्चता की रक्षा करने के संवैधानिक कार्य को पूरा करें-एक दुभाषिया, संरक्षक और संविधान के संरक्षक के रूप में, न्यायपालिका सरकार द्वारा संविधान के उल्लंघन की जांच और नियंत्रण करती है जब वे अपने अधिकारों का उल्लंघन करते हैं।

संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन, संविधान की मूल संरचना का उल्लंघन, मौलिक अधिकारों का उल्लंघन या कानून के विपरीत कार्य-न्यायिक समीक्षा की शक्ति ने सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को अपने दायरे में लेते हुए विस्तार किया है, फिर भी, न्यायिक समीक्षा की इस शक्ति का प्रयोग करते हुए, अदालतें विधायिका और कार्यपालिका के लिए संविधान द्वारा चिह्नित क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करती हैं, क्योंकि अदालतें कानून या सरकारी कार्रवाई की वैधता और वैधता की जांच करती हैं, न कि विधायी उपाय या सरकारी कार्रवाई के सापेक्ष गुण या दोषों के पीछे की बुद्धिमत्ता-न ही संविधान अदालतों को संविधान द्वारा उनके लिए आरक्षित क्षेत्रों में दूसरों को निर्देश, सलाह या उपदेश देने की अनुमति देता है, बशर्ते कि विधायिका या कार्यपालिका अपनी संवैधानिक सीमाओं या वैधानिक शर्तों का उल्लंघन न करे।

सिद्धांत/सिद्धांतः शक्ति के पृथक्करण का सिद्धांत-यह सिद्धांत विधायिका को एक के निर्णय की घोषणा करने से रोकता है

न्यायालय शून्य होगा और इसका कोई प्रभाव नहीं होगा, जबकि विधायिका के पास अभी भी [2019] 12 एस. सी. आर. हैं।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

एक मान्यकारी कानून बनाने की विधायी क्षमता जो

निर्णय में बताए गए दोष को दूर करता है-हालाँकि, यह विधानमंडल को निर्णय घोषित करने की अनुमति नहीं देता है किसी कानून को लागू करना अमान्य है, लेकिन विधायिका को उस आधार को मौलिक रूप से बदलकर निर्णय के आधार को छीनने की अनुमति देता है जिसके आधार पर इसे घोषित किया गया था-इसलिए, सभी महत्वपूर्ण नियंत्रण और संतुलन कार्य का प्रयोग करते हुए, प्रत्येक शाखा को उस विशाल जिम्मेदारी के प्रति सचेत होना चाहिए जो यह सुनिश्चित करने के लिए उन पर टिकी हुई है कि

संस्थागत सम्मान और सौहार्द बनाए रखा जाता है-भारत का संविधान

- निर्णय/आदेश-विधान।

परम पूज्य केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम।

केरल राज्य और एक अन्य (1973) 4 एस. सी. सी. 225: [1973] 0 पूरक। एस. सी. आर. 1; राजस्थान राज्य और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य (1977) 3 एस. सी. सी. 592: [1978] 1 एससीआर 1; आई. आर. कोएल्हो (मृत) एल. आर. द्वारा वी. तमिलनाडु राज्य (2007) 2 एससीसी 1: [2007] 1 एस. सी. आर. 706; तमिलनाडु राज्य बनाम। केरल राज्य (2014) 12 एससीसी 696: [2014] 12

एस. सी. आर. 875-अनुसरण

बिनॉय विश्वम बनाम। भारत संघ और अन्य (2017) 7 एस. सी. सी. 59 [2017] 7 एस. सी. आर. 1; कल्पना मेहता और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य (2018) 7 एससीसी 1: [2018]

4 एस. सी. आर. 1-निर्भर

सिद्धांत/सिद्धांत: शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत अदालतों द्वारा व्याख्या और निर्णय के बीच अंतर

एक ओर और दूसरी ओर विधायिका द्वारा कानून बनाने की शक्ति-निर्णय के परिणामस्वरूप अक्सर के रूप में वर्णित किया जाता है

न्यायाधीश ने कानून बनाया, लेकिन निर्णय के दौरान अनुच्छेद 14,19 और 21 के प्रावधानों के अनुसार कानूनों और अधिकारों की व्याख्या न्यायाधीशों द्वारा एक प्रयास या कानून का कार्य नहीं है-विधानमंडल स्वयं न्यायपालिका को उन उदाहरणों के रूप में मानदंड निर्धारित करने का काम सौंपता है जो अक्सर न्यायाधीश द्वारा बनाए गए कानून के रूप में बोले जाते हैं-ऐसा कानून, भले ही न्यायपालिका द्वारा बनाया गया हो, शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन नहीं करेगा और संवैधानिक कार्यों के अनुरूप है-इस प्रकार, कुछ सीमाओं के भीतर कानून बनाना न्यायाधीश की भूमिका का एक वैध तत्व है,

यदि अपरिहार्य नहीं है-एक न्यायाधीश को कानूनी प्रावधानों के आधार पर निर्णय लेना और निर्णय लेना पड़ता है।

जो किसी विशेष मुद्दे पर अनिश्चित होने पर स्पष्टीकरण और स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती है-इसके लिए एक न्यायाधीश को डी. आर. प्रावधानों की व्याख्या करने की आवश्यकता होती है।

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और ए. एन. ए. आर. का संघ

मामले का निर्णय करने के लिए और इस प्रक्रिया में, वह सहारा ले सकता है और जीवन के अधिकार सहित मौलिक अधिकारों पर भरोसा कर सकता है, लेकिन फिर भी वह ऐसे प्रावधानों की व्याख्या करते समय किसी कानून का निर्माण नहीं करता है-ऐसी व्याख्या को 'न्यायाधीश निर्मित कानून' कहा जाता है, लेकिन कानून नहीं।

भारत का संविधान-न्यायाधीश ने कानून बनाया।

' आइलीन द्वारा शक्तियों का संवैधानिक पृथक्करण

कवनाघ-संदर्भित।

कानून: विधायिका और न्यायपालिका की शक्ति/कर्तव्य-के बीच अंतर: विधान या कानून बनाने में विधायिका के समक्ष मौजूद विकल्पों की एक विस्तृत श्रृंखला से कुछ राजनीतिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों को प्राथमिकता देने का विकल्प शामिल है-यह विविध और वैकल्पिक मूल्यों को अभिव्यक्ति/अर्थ देने और इसे मिश्रित करने के लिए एक संतुलन और एकीकृत अभ्यास है।

इस तरह से कि यह कई दृष्टिकोणों का प्रतिनिधि है ताकि इसे पारित करने के लिए अन्य निर्वाचित प्रतिनिधियों से समर्थन प्राप्त हो। संस्थागत समावेश और स्वीकृति-विधान, एक अधिनियम या कानून के रूप में, व्यापक और सामान्य सिद्धांतों को निर्धारित करता है यह कानून का स्रोत है जिसे न्यायाधीशों को लागू करने के लिए कहा जाता है-न्यायाधीश, जब वे कानून लागू करते हैं, तो वे भाषा के नियमों और अच्छी तरह से पहचाने गए पृष्ठभूमि अनुमानों द्वारा विवश होते हैं कि विधायिका ने कानून को पढ़ने का इरादा किस तरह से किया था -

न्यायाधीशों द्वारा कानून विधायिका द्वारा कानून के अधिनियमन का पर्याय नहीं है-न्यायाधीशों के पास यह बताने की शक्ति है कि किसी विशेष मामले में क़ानून कितना सटीक रूप से लागू होगा-इस तरह से, वे इसे लागू करके विधायिका द्वारा तैयार किए गए कानून को पूरा करते हैं-व्याख्या की इस शक्ति या न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग कानून के अधिनियमन के बाद किया जाता है, जिसे तब निम्नलिखित विषयों का विषय बनाया जाता है -

अदालतों के समक्ष व्याख्या या चुनौती।

विधियों की व्याख्या: व्याख्यात्मक शक्ति का प्रयोग करते समय, अदालतें आत्मा और प्रणोदन से शक्ति प्राप्त कर सकती हैं।

संवैधानिक मूल्यों को साकार करने के लिए संविधान में अंतर्निहित तत्व, लेकिन न्यायिक संयम की अवधारणा के प्रति जीवित रहना चाहिए, जिसके लिए न्यायाधीशों को शक्ति की परिभाषित सीमाओं के भीतर मामलों का फैसला करने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, अदालतें प्रस्तुतियों को स्वीकार नहीं करेंगी और विशुद्ध रूप से नीति के मामले में आदेश पारित नहीं करेंगी या न्यायिक कानून नहीं बनाएंगी जो लोगों के कार्यपालिका या निर्वाचित प्रतिनिधियों के लिए है।

लागू करने के लिए।

एस.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

डी. के. बसु बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1997) 1 एससीसी 416: [1996] 10 पूरक। एस. सी. आर. 284; सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन और अन्य (1978) 4 एस. सी. सी. 494: 1979

(1) एससीआर 392; फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम। प्रशासक, केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली और अन्य (1981) 1 एस. सी. सी. 608

: 1981 (2) एस. सी. आर. 516; के. एस. पुट्टास्वामी और एक अन्य बनाम

भारत संघ और अन्य (2017) 10 एससीसी 1: [2017]

10 एस. सी. आर. 569; रोमिला थापर और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य (2018) 10 एस. सी. सी. 753: [2018] 11 एससीआर 951; तहसीन एस. पूनावाला बनाम। भारत संघ और

अन्य (2018) 9 एस. सी. सी. 501: [2018] 9 एस. सी. आर. 291; विशाखा और अन्य बनाम। राजस्थान राज्य और अन्य (1997) 6

एससीसी 241 [1997] 3 पूरक। एससीआर 404; विनीत नारायण और अन्य बनाम। भारत संघ और एक अन्य (1998) 1

एस. सी. सी. 226 [1997] 6 पूरक। एस. सी. आर. 595; विनाश

सार्वजनिक और निजी संपत्तियाँ, आर. ई. वी. आंध्र राज्य प्रदेश और अन्य (2009) 5 एस. सी. सी. 212; लक्ष्मीकांत पांडे बनाम। भारत संघ (1984) 2 एस. सी. सी. 244; राज्य

पश्चिम बंगाल और अन्य बनाम। संपत लाल और अन्य (1985) 1 एस. सी. सी. 317; के. वीरास्वामी बनाम। भारत संघ

और अन्य (1991) 3 एस. सी. सी. 655 दिल्ली न्यायिक सेवा

अन्य वी। भारत संघ और अन्य (2018) एस. सी. सी. ऑनलाइन 2679; श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और एक अन्य बनाम। ब्रोच बरो नगरपालिका और अन्य (1969) 2 एस. सी. सी

(2002) 4 एस. सी. सी. 578; भीम सिंह बनाम भारत संघ (2010) 5 एससीसी 538: [2010] 6 एससीआर 218; मनोज नरूला बनाम। भारत संघ (2014) 9 एससीसी 1: [2014] 9 एससीआर 965; गैंडा

राम और अन्य बनाम। दिल्ली नगर निगम और

अन्य (2010) 10 एस. सी. सी. 715: [2010] 12 एस. सी. आर. 996; सामान्य कारण: ए रजिस्टर्ड सोसाइटी v. भारत संघ

(2017) 7 एससीसी 158: [2017] 3 एस. सी. आर. 291-संदर्भित।

डॉ. अश्विनी कुमार बनाम। भारत और ए. एन. सी. का संघ

मामला कानून संदर्भ

1996] 10 पूरक। एससीआर 284

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1979] 1 एससीआर 392

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1981] 2 एससीआर 516

पैरा 4

संदर्भित किया गया है

2017] 10 एससीआर 569

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

2018] 11 एससीआर 951

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

2018] 9 एससीआर 291

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1997] 3 पूरक। एससीआर 404

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1997] 6 पूरक। एससीआर 595

पैरा 4

संदर्भित किया गया है

2009) 5 एससीसी 212

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1984) 2 एससीसी 244

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1985) 1 एस. सी. सी. 317

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1991) 3 एस. सी. सी. 655

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1991) 4 एस. सी. सी. 406

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

2018) एस. सी. सी. ऑनलाइन 2679

संदर्भित किया गया है

पैरा 4

1973] 0 पूरक। एससीआर 1

पीछा किया।

पैरा 14

1978] 1 एससीआर 1

पीछा किया।

पैरा 14

2007] 1 एससीआर 706

पीछा किया।

पैरा 14

2014] 12 एससीआर 875

पीछा किया।

पैरा 14

1970] 1 एससीआर 388

संदर्भित किया गया है

पैरा 14

2017] 7 एससीआर 1

उस पर भरोसा करें

पैरा 15

2018] 4 एससीआर 1

उस पर भरोसा करें

पैरा 16

2015] 14 एससीआर 613

पैरा 21

संदर्भित किया गया है

2002) 4 एस. सी. सी. 578

संदर्भित किया गया है

पैरा 22

2010] 6 एससीआर 218

पैरा 24

संदर्भित किया गया है

1989] 3 एससीआर 488

उस पर भरोसा करें

पैरा 28

2012] 2 एससीआर 912

उस पर भरोसा करें

पैरा 29

2017] 1 एससीआर 658

उस पर भरोसा करें

पैरा 30

2014] 9 एससीआर 965

संदर्भित किया गया है

पैरा 30

2010] 12 एससीआर 996

संदर्भित किया गया है

पैरा 30

[2019] 12 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

3 एससीआर 291

संदर्भित किया गया है

[2017]

पैरा 31

[2003] 4 पूरक। एससीआर 222

संदर्भित किया गया है

पैरा 34

[1993] 3 पूरक। एससीआर 141

संदर्भित किया गया है

पैरा 34

[2004] 2 पूरक। एससीआर 723

संदर्भित किया गया है

पैरा 34

पैरा 34

एयर 1994 बम 323

संदर्भित किया गया है

[1983] 2 एससीआर 337

संदर्भित किया गया है

पैरा 35

[1993] 2 एससीआर 581

संदर्भित किया गया है

पैरा 36

[1995] 1 पूरक। एससीआर 44

संदर्भित किया गया है

पैरा 36

[2018] 12 एससीआर 51

पैरा 39

संदर्भित किया गया है

[2012] 14 एससीआर 862

संदर्भित किया गया है

पैरा 40

नागरिक मूल न्यायनिर्णय: विविध अनुप्रयोग

2018 का सं. 2560। 2016 की लिखित याचिका (सिविल) संख्या 738

श्री कॉलिन गोंजाल्विस, वरिष्ठ अधिवक्ता। (एसी)

के. के. वेणुगोपाल, ए. जी., सुश्री माधवी दीवान, ए. एस. जी., सुश्री दिव्या बंग,

सुश्री रौशन तारा जसवाल, सुश्री तनुश्री निगम, आर. बालासुब्रमण्यम, सुश्री श्रद्धा देशमुख, बी. वी. बलराम दास, सिद्धेश कोतवाल,

सुश्री बांसुरी स्वराज, सुश्री श्रेया भटनागर, रघुनाथ सेतुपति,

गगन नारंग, सुश्री अर्शिया घोष, सुश्री आस्था शर्मा, सुश्री शोभा

गुप्ता, सौरव रॉय, सुश्री स्वरूपमा चतुर्वेदी, अनूप कंदारी, निशांत आर. कटनेश्वरकर, वी. एन. रघुपति, सिबो शंकर मिश्रा, निरंजन साहू, लीशांगथेम रोशमानी ख। , सुश्री अनुपमा नगंगोम, सुश्री मैबम बबीना, एम. योगेश कन्ना, एस. पार्थ सारथी, एस. राजा

राजेश्वरन, शुभदीप रॉय, कबीर शंकर बोस, रिजुक सरकार, के. वी. जगदीशवरन, श्रीमती जी. इंदिरा, सुहान मुखर्जी, सुश्री आस्था शर्मा, अमित वर्मा, सुश्री डिंपल नागपाल (मेसर्स पी. एल. आर. चैम्बर्स एंड कंपनी के लिए), एम. शोएब आलम, उज्जवल सिंह, गौतम प्रभाकर, मोजाहिद करीम खान,

श्रीमती के. एनाटोली सेमा, अमित कुमार सिंह, सुश्री अरुणा माथुर, अवनीश अर्पुथम, सुश्री अनुराधा अर्पुथम, सुश्री गीतांजलि, जी. प्रकाश, जिष्णु एम. एल., श्रीमती प्रियंका प्रकाश,

श्रीमती बीना प्रकाश, वी. जी. प्रगसम, एस. प्रभु रामसुब्रमण्यन, एस. मनुराज, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

डॉ. अश्विनी कुमार-व्यक्तिगत रूप से आवेदक।

डॉ. अश्विनी कुमार बनाम। भारत और ए. एन. ए. आर. का संघ

न्यायालय का आदेश पारित किया गया था
संजीव खन्ना, जे।

1. यह आदेश डॉ. अश्विनी कुमार, व्यक्तिगत रूप से आवेदक, जो एक वरिष्ठ अधिवक्ता और पूर्व कानून मंत्री और संसद सदस्य हैं, द्वारा दायर 2018 के विविध आवेदन संख्या 2560 का निपटारा करेगा, जो निम्नलिखित राहत के लिए प्रार्थना कर रहे हैं:

" अतः उपरोक्त परिसर में यह सम्मानपूर्वक प्रार्थना की जाती है कि चूंकि सरकार द्वारा माननीय महान्यायवादी के बयान के अनुसार कोई कार्रवाई नहीं की गई है, इसलिए यह रुख अपनाया गया है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और कानून द्वारा
भारत आयोग ने अक्टूबर 2017 की अपनी रिपोर्ट में और क्योंकि इस माननीय न्यायालय, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, भारत के विधि आयोग और संसद की प्रवर समिति द्वारा अनुच्छेद 21 के तहत गरिमा के साथ जीवन के अधिकार के एक अभिन्न घटक के रूप में प्रार्थना की योग्यता को वस्तुतः स्वीकार किया गया है और स्वीकार किया गया है, इसलिए यह माननीय न्यायालय केंद्र सरकार को हिरासत में यातना के खिलाफ एक उपयुक्त रुख-अकेले, व्यापक कानून बनाने का निर्देश दे सकता है जैसा कि उसने 17 जुलाई 2018 के अपने फैसले के माध्यम से भीड़ हिंसा/लिंचिंग के मामले में निर्देश दिया है।

2. आवेदक ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत 2016 की उपरोक्त शीर्षक वाली रिट याचिका (सिविल) संख्या 738 दायर की थी।

संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा अपनाया गया और 10 दिसंबर 1984 को हस्ताक्षर, अनुसमर्थन और परिग्रहण के लिए खोला गया 'यातना और अन्य क्रूरता, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार या सजा के खिलाफ सम्मेलन' (संक्षेप में संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन) पर आधारित प्रभावी और उद्देश्यपूर्ण विधायी ढांचा/कानून। भारत ने 14 अक्टूबर 1997 को संयुक्त राष्ट्र समझौते पर हस्ताक्षर किए थे। हालांकि, भारत ने संयुक्त राष्ट्र समझौते की पुष्टि नहीं की है। 3. 2016 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 738 का निपटारा 27 नवंबर 2017 के आदेश के माध्यम से किया गया था, जो इस प्रकार है:

" भारत के विद्वान महान्यायवादी श्री के. के. वेणुगोपाल ने कहा कि रिट याचिका में की गई प्रार्थना विधि आयोग और विधि आयोग में चर्चा का विषय रही है। आयोग पहले ही कुछ सिफारिशें कर चुका है। वह.

आगे यह प्रस्तुत किया जाएगा कि रिपोर्ट पर सरकार द्वारा गंभीरता से विचार किया जा रहा है। उपरोक्त कथन को ध्यान में रखते हुए, हम [2019] 12 एस. सी. आर. करते हैं।

इस रिट याचिका को लंबित रखने का इरादा नहीं है और यह तदनुसार है

निकाल दिया। लागत के बारे में कोई आदेश नहीं होगा।

4. जीवन और स्वतंत्रता के अधिकार और इस न्यायालय के निर्णयों पर अपने मामले की भविष्यवाणी करते हुए आवेदक ने तर्क दिया था कि हिरासत में यातना अपराध है मानवता के खिलाफ जो सीधे अनुच्छेद 21 का उल्लंघन और उल्लंघन करता है

अदालत ने कहा था कि कैदियों को लागू करने योग्य स्वतंत्रता है, हालांकि अवमूल्यन किया गया है लेकिन कभी विमुद्रीकृत नहीं किया गया है और इसलिए, यह जेल और पुलिस की सनक और क्रूरता से निपटने के लिए इस अदालत के अधिकार क्षेत्र और सीमा के भीतर है। इसी तरह, फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम। प्रशासक, केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली और अन्य 3, इस न्यायालय ने कहा था कि किसी भी रूप में यातना अमानवीय, अपमानजनक और मानव गरिमा के लिए अपमानजनक है और जीवन के अधिकार में एक अतिक्रमण का गठन करता है और संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा निषिद्ध है, क्योंकि कोई भी कानून यातना या क्रूरता, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार की अनुमति नहीं देता है। मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा के अनुच्छेद 5 और नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय वाचा के अनुच्छेद 7 का संदर्भ दिया गया था जो सभी रूपों में यातना को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित करता है। हाल ही में, के. एस. पुट्टास्वामी और अनदर वी. भारत संघ और अन्य इस न्यायालय ने एक बार फिर मानव गरिमा के अधिकार पर जोर दिया था, जिसका सबसे पहले और सबसे महत्वपूर्ण अर्थ है 'एक इंसान के रूप में' प्रत्येक इंसान की गरिमा। जब किसी व्यक्ति के जीवन में मानवीय गरिमा का उल्लंघन किया जाता है और शारीरिक या मानसिक कल्याण को नकार दिया जाता है और नुकसान पहुंचाया जाता है, तो न्यायालय संवैधानिक मूल्यों की रक्षा और सुरक्षा के लिए हस्तक्षेप करेगा। रोमिला थापर और अन्य बनाम में भी निर्णय का संदर्भ दिया गया था। भारत संघ और अन्य 3 का दावा है कि मौजूदा कानून और बार-बार न्यायिक निर्णयों के बावजूद, हिरासत में यातना अभी भी बनी हुई है भारत में व्यापक और व्यापक। हमारा ध्यान एशियन सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स की रिपोर्ट की ओर आकर्षित किया गया था जो अन्य बातों के साथ-साथ इस पर आधारित थी -

1 1 (1997) 1 एस. सी. सी. 416

2 (1978) 4 एससीसी 494

3 (1981) 1 एस. सी. सी. 608

4 (2017) 10 एससीसी 1

5 (2018) 10 एससीसी 753 डी. आर.

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

1 अप्रैल 2017 से 28 फरवरी 2018 की अवधि के दौरान न्यायिक हिरासत में 1530 मौतों और पुलिस हिरासत में 144 मौतों सहित 1674 हिरासत में मौतों को स्वीकार करते हुए भारत सरकार द्वारा संसद में प्रस्तुत जानकारी और डेटा। भारत ने लगातार और स्पष्ट रूप से

अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर हिरासत में यातना की निंदा और निंदा की गई और संयुक्त राष्ट्र समझौते पर हस्ताक्षर किए हैं, लेकिन संयुक्त राष्ट्र समझौते की पुष्टि करने के लिए सरकार की अनिच्छा, जो एक व्यापक और स्वतंत्र कानून की परिकल्पना करती है, यह तर्क दिया गया था कि यह चौंका देने वाला और अस्पष्ट है। वर्तमान में भारतीय वैधानिक कानून सामंजस्य में नहीं है और संयुक्त राष्ट्र समझौते के साथ प्रक्रियात्मक और मूल दोनों रूप से कई मामलों में कम है और इस प्रकार,

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग द्वारा की गई सिफारिशों, अक्टूबर 2017 में भारत के विधि आयोग की रिपोर्ट और 2 दिसंबर 2010 की संसद की प्रवर समिति की रिपोर्ट और भारत सरकार द्वारा बार-बार की गई प्रतिबद्धताओं के बावजूद। तहसीन एस. पूनावाला बनाम का संदर्भ दिया गया था। भारत संघ और अन्य जिसमें इस न्यायालय ने देश में भीड़ हिंसा/लिंचिंग से निपटने के लिए एक उपयुक्त कानून बनाने की आवश्यकता पर प्रकाश डाला था। विशाखा और अन्य बनाम में इस न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा रखा गया था। राजस्थान राज्य और अन्य, विनीत नारायण और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य, सार्वजनिक और निजी संपत्तियों का विनाश, आरई वी। आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य, लक्ष्मीकांत पांडे बनाम। भारत संघ, पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य बनाम। संपत लाल और अन्य 1 1, के. वीरास्वामी बनाम। भारत संघ 6 (2018) 9 एससीसी 501 7 (1997) 6 एससीसी 241 8 (1998) 1 एससीसी 226 9 (2009) 5 एससीसी 212 10 (1984) 2 एससीसी 244

11 (1985) 1 एस. सी. सी. 317 [2019] 12 एस. सी. आर.

और अन्य 1 2 12 और दिल्ली न्यायिक सेवा संघ, तीस हजारी न्यायालय, दिल्ली बनाम। गुजरात राज्य और अन्य 1 3. महेंद्र चावला और अन्य बनाम का उल्लेख करते हुए। भारत संघ और अन्य 1 4, और तहसीन एस. पूनावाला (ऊपर) सहित अन्य निर्णयों में, यह तर्क दिया गया कि यह न्यायालय वैधानिक अधिनियमों के संबंध में भारत सरकार को सुझाव देने, सिफारिश करने, सलाह देने, मार्गदर्शन करने और निर्देश देने से पीछे नहीं हटेगा। यह प्रस्तुत किया गया कि संवैधानिक दायित्व को लागू करने में देरी और निष्क्रियता वर्ष 1997 से संबंधित है जब भारत ने संयुक्त राष्ट्र समझौते पर हस्ताक्षर किए थे, लेकिन प्रतिबद्धताओं और सिफारिशों के बावजूद सरकार एक व्यापक कानून बनाने में विफल रही है

ऊपर बनाया और देखा गया। यह प्रस्तुत किया गया था कि यह अनुच्छेद 21 के उल्लंघन को बचाने में सरकार के अनुचित और अस्वीकार्य आचरण को दर्शाता है और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता है। इस प्रकार, न्यायालय भारत संघ को संयुक्त राष्ट्र समझौते के संदर्भ में हिरासत में यातना से निपटने के लिए एक कानून बनाने का निर्देश जारी कर सकता है।

5. यहां यह ध्यान दिया जा सकता है कि आवेदक राज्यसभा की प्रवर समिति का अध्यक्ष था जिसने रिपोर्ट प्रस्तुत की थी

हिरासत में यातना पर एक व्यापक स्वतंत्र कानून की आवश्यकता को दर्शाता है।

6. प्रत्यर्थी संख्या 1-भारत संघ ने अपने जवाब में कहा है कि विधि आयोग के मसौदे के आधार पर तैयार किया गया कानून रिपोर्ट सक्रिय रूप से विचाराधीन है और इसे हितधारकों, यानी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों को उनके सुझावों के लिए भेजा गया था।

इस बात पर प्रकाश डाला गया कि 'आपराधिक कानून' और 'आपराधिक प्रक्रिया' भारत के संविधान की सातवीं अनुसूची की समवर्ती सूची में आते हैं और इसलिए, भारत के विधि आयोग द्वारा की गई सिफारिशों पर राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेशों की टिप्पणियां और विचार मांगे गए थे। हो सकता है कि कुछ देरी हुई हो।

राज्यों ने अपनी प्रतिक्रिया प्रस्तुत नहीं की, हालांकि भारत संघ ने 27 जून 2018,27 नवंबर 2018 और 20 दिसंबर 2018 को अनुस्मारक भेजकर कदम उठाए। 12 फरवरी 2019 के बाद के हलफनामे से पता चलता है कि सभी राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों ने अपने इनपुट/सुझाव दाखिल कर दिए हैं। और यह कि कानून बनाने का सवाल विचाराधीन है। अलग-अलग विचारों और विकल्पों की बारीकियों, बारीकियों और स्पेक्ट्रम को देखते हुए इस प्रकृति का कानून बनाना एक जटिल और चुनौतीपूर्ण कार्य है। कानून

12 (1991) 3 एस. सी. सी. 655

13 (1991) 4 एस. सी. सी. 406

14 (2018) एससीसी ऑनलाइन 2679 डी. आर.

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

उचित बहस, विचार-विमर्श और एक बार आवश्यक होने के बाद कानून बनाए जाते हैं।

7. हमारे पास डॉ. अश्विनी कुमार और भारत के विद्वान अटॉर्नी जनरल श्री के. के. वेणुगोपाल के अलावा वरिष्ठ अधिवक्ता और न्याय मित्र श्री कॉलिन गोंजाल्विस और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की वकील सुश्री शोभा गुप्ता, जो इससे पहले दूसरी प्रतिवादी थीं, की बात सुनी गई है। हमें।

8. शुरुआत में, हमें यह स्पष्ट करना चाहिए कि वर्तमान आदेश से, हम

यह एक बहुत ही सीमित विवाद का निर्णय होगा। आवेदक की प्रार्थना है कि इस न्यायालय को संसद को संयुक्त राष्ट्र के आधार पर हिरासत में यातना के खिलाफ एक स्वतंत्र और व्यापक कानून बनाने का निर्देश देना चाहिए

सम्मेलन। की गई प्रार्थना के लिए न्यायालय को इस सवाल की जांच करने और जवाब देने की आवश्यकता है कि क्या संवैधानिक योजना के भीतर, यह न्यायालय संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के आधार पर एक नया कानून बनाने के लिए संसद को कोई निर्देश जारी कर सकता है और उसे करना चाहिए।

9. मोंटेस्क्यू द्वारा समर्थित शक्तियों के कठोर पृथक्करण का शास्त्रीय या शुद्ध सिद्धांत, जो अमेरिकी संविधान का आधार है, स्पष्ट रूप से लोकतंत्र के संसदीय रूप पर लागू नहीं होता है।

जैसा कि भारत और ब्रिटेन में मौजूद है, कार्यकारी और विधायी शाखाओं के लिए उनके द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियों और कार्यों के संदर्भ में जुड़े हुए हैं और ओवरलैप हैं और वे जिन कर्मियों को लैस करते हैं वे कुछ हद तक सामान्य हैं। हालाँकि, ब्रिटेन के विपरीत, भारत में एक लिखित संविधान है, जो सर्वोच्च है और राज्य की तीन शाखाओं-विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका की शक्तियों, भूमिकाओं और कार्यों को विभाजित करता है। ये विभाजन संविधान द्वारा निर्धारित सीमाएँ और सीमाएँ हैं जो तीन शाखाओं में से किसी एक द्वारा दूसरी शाखा के अधिकार क्षेत्र में आने वाली शक्तियों, कार्यों और कार्यों में उल्लंघन को रोकने के लिए निर्धारित की गई हैं। तीनों शाखाओं को संवैधानिक विभाजन का सम्मान करना चाहिए और तिकड़ी के बीच भूमिकाओं और कार्यों के आवंटन में बाधा नहीं डालनी चाहिए। शक्तियों और कार्यों को विभाजित करने वाली संवैधानिक योजना का पालन करना शक्ति के संभावित दुरुपयोग के खिलाफ एक सुरक्षा और नियंत्रण है और कानून का शासन तब सुरक्षित होता है जब प्रत्येक

शाखा अपनी शक्तियों, कार्यों के लिए संवैधानिक सीमाओं का पालन करती है

और भूमिकाएँ।

10. शक्तियों के पृथक्करण का आधुनिक सिद्धांत यह स्वीकार नहीं करता है कि

यद्यपि तीन शाखाओं को स्वीकार करके शक्ति और श्रम के विभाजन के लाभों पर जोर दिया जाता है, लेकिन संविधान द्वारा परिभाषित अलग-अलग और विशिष्ट भूमिकाएँ और कार्य हैं। सभी संस्थानों को अपने अधिकार क्षेत्र में कार्य करना चाहिए और दूसरे के अधिकार क्षेत्र में अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। इसके अलावा, प्रत्येक शाखा को सुशासन के सामान्य हित में एक-दूसरे का समर्थन करना चाहिए। यह अलगाव कम से कम दो तरीकों से कानून के शासन को सुनिश्चित करता है। यह प्रत्येक शाखा द्वारा लिए गए निर्णयों, अर्थात् विधायिका द्वारा पारित अधिनियमों, कार्यपालिका द्वारा लिए गए आदेशों और नीतिगत निर्णयों और निर्णयों को संवैधानिक और संस्थागत वैधता प्रदान करता है।

न्यायपालिका द्वारा विधान और सरकारी कार्रवाई की वैधता पर न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए घोषित किया गया। संस्थानों की शक्तियों और कार्यों को अलग करके, संविधान एक ऐसी संरचना सुनिश्चित करता है जहां संस्थान अपनी संस्थागत ताकत के अनुसार कार्य करते हैं। दूसरा, और कुछ हद तक विरोधाभासी रूप से, यह नियंत्रण और संतुलन की एक प्रणाली बनाता है क्योंकि संविधान प्रत्येक शाखा द्वारा दूसरी शाखा द्वारा किए गए कार्यों और कार्यों में हस्तक्षेप के लिए अक्षांश की एक डिग्री प्रदान करता है। यह एक विशेष शाखा में शक्ति की सांद्रता की जाँच करता है।

या कोई संस्था। 11. एक निर्वाचित और प्रतिनिधि निकाय के रूप में विधायिका लोगों की लोकतांत्रिक आकांक्षाओं को प्रभावी बनाने और उन्हें पूरा करने के लिए कानून बनाती है।

लागू की गई प्रक्रियाएँ सावधानीपूर्वक विचार करने के लिए बनाई गई हैं और विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक समूहों के व्यापक और अलग-अलग हितों, आवाजों और सभी प्रकार की राय पर विचार करना। विधानमंडल एक विचारशील और प्रतिनिधि निकाय के रूप में कार्य करता है। यह इस देश के मतदाताओं और नागरिकों के प्रति सीधे तौर पर जवाबदेह और जवाबदेह है। यह

प्रतिनिधित्व और जवाबदेही का सिद्धांत संसद या राज्य विधानसभाओं द्वारा बनाए गए विधानों और कानूनों को वैधता प्रदान करता है। संविधान का अनुच्छेद 245 संसद और राज्य को अधिकार देता है।

संसद/राज्य विधानसभा में उचित बहस और चर्चा के बाद क्रमशः भारत के पूरे या एक भाग के लिए और पूरे या राज्य के एक भाग के लिए कानून बनाने के लिए विधायिकाएँ। 12. कार्यपालिका के पास सरकारी नीतियों को तैयार करने और डी. आर. द्वारा पारित किए जाने वाले कानूनों का प्रस्ताव करने की प्राथमिक जिम्मेदारी होती है।

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

विधायिका कानून बन जाती है। संविधान के अनुच्छेद 73 और 162 के आधार पर, कार्यपालिका की शक्तियां और कार्य व्यापक और व्यापक हैं, क्योंकि वे ऐसे मामलों को शामिल करते हैं जिनके संबंध में संसद/राज्य विधायिका कानून बना सकती है और कार्यपालिका को भारत सरकार या राज्य द्वारा प्रयोग करने योग्य अधिकार और अधिकार क्षेत्र प्रदान करती है।

सरकार, जैसा भी मामला हो। विधायी निकायों के प्रतिनिधि के रूप में और कानून की शर्तों के अधीन, कार्यपालिका दूसरे चरण के कानून बनाती है जिन्हें 'अधीनस्थ या प्रत्यायोजित कानून' के रूप में जाना जाता है। जिन क्षेत्रों में कोई कानून नहीं है, वहां कार्यपालिका के पास नीतियां, योजनाएं आदि बनाने की शक्ति है, जो संसद या राज्य विधानमंडल की कानून बनाने की शक्ति के साथ व्यापक है। साथ ही राजनीतिक

कार्यपालिका विधायिका के प्रति जवाबदेह होती है और तब तक पद धारण करती है जब तक उन्हें विधायिका का समर्थन और विश्वास प्राप्त नहीं हो जाता। अतः यह है कि पारस्परिक निर्भरता, अंत:क्रिया और यहां तक कि कर्मियों की समानता /

विधायिका और कार्यपालिका के सदस्य। इसलिए, कार्यपालिका बहु-कार्यात्मक भूमिका निभाती है और एकात्मक नहीं होती है। इस बहुआयामी और व्यापक भूमिका के बावजूद, संवैधानिक योजना यह सुनिश्चित करती है कि इस परस्पर निर्भरता के भीतर, अलगाव की एक डिग्री है जो हस्तक्षेप की जांच करने और गैर-राजनीतिक कार्यपालिका की रक्षा करने के लिए एक तंत्र के रूप में कार्य करती है। संविधान का भाग XIV संघ या राज्य की सेवा करने वाले व्यक्तियों की "संघ और राज्यों के तहत सेवाओं", यानी भर्ती, कार्यकाल, सेवा के नियम और शर्तें, आदि से संबंधित है और उन्हें प्रदान करता है।

काफी हद तक सुरक्षा "। लाभ का पद प्रतिबंध, जैसा कि विधायकों पर लागू होता है और अनुच्छेद 102 और 191 द्वारा निर्धारित किया गया है, विधायिका और कार्यपालिका के बीच अलगाव और स्वतंत्रता सुनिश्चित करने के लिए है।

13. शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का सबसे महत्वपूर्ण प्रभाव राज्य के अन्य अंगों से न्यायपालिका की संस्थागत स्वतंत्रता के संदर्भ में देखा और महसूस किया जाता है। न्यायपालिका, कार्मिकों के मामले में, न्यायाधीश स्वतंत्र हैं। विधायिका के सदस्यों के विपरीत न्यायाधीश किसी का प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं, सख्ती से बोलते हुए नागरिकों को भी नहीं। न्यायाधीश नहीं हैं

राजनीतिक कार्यपालिका विधायिका के प्रति जवाबदेह और उत्तरदायी होती है और निर्वाचित प्रतिनिधि मतदाताओं के प्रति होते हैं। यह स्वतंत्रता यह सुनिश्चित करती है कि न्यायाधीश बिना किसी दबाव और पक्षपात के निष्पक्ष और समान तरीके से न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए संविधान की सर्वोच्चता की रक्षा करने के संवैधानिक कार्य को पूरा करें। एक दुभाषिया, संरक्षक और संविधान के रक्षक के रूप में, न्यायपालिका सरकार द्वारा संविधान के उल्लंघन की जांच और नियंत्रण करती है जब वे अपनी संवैधानिक सीमाओं को पार करते हैं, संविधान के मूल ढांचे का उल्लंघन करते हैं, मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करते हैं या कानून के विपरीत कार्य करते हैं।

न्यायिक समीक्षा ने सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को अपने दायरे में लेते हुए विस्तार किया है। फिर भी, न्यायिक शक्ति का प्रयोग करते हुए समीक्षा, अदालतें द्वारा चिह्नित क्षेत्र पर अतिक्रमण नहीं करती हैं

विधायिका और कार्यपालिका के लिए संविधान, क्योंकि अदालतें कानून या सरकारी कार्रवाई की वैधता और वैधता की जांच करती हैं, न कि विधायी उपाय या सरकारी कार्रवाई के सापेक्ष गुण या दोषों के पीछे के विवेक की। न ही संविधान अदालतों को संविधान द्वारा उनके लिए आरक्षित क्षेत्रों में दूसरों को निर्देश देने, सलाह देने या उपदेश देने की अनुमति देता है, बशर्ते कि विधायिका या कार्यपालिका अपनी संवैधानिक सीमाओं या वैधानिक शर्तों का उल्लंघन न करे। "सभी शक्तियाँ अतिक्रमणकारी प्रकृति की हैं" वाक्यांश का उल्लेख करते हुए, जिसे न्यायपालिका न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए जाँचती है, यह कहा गया है

15 1 5 में कहा गया है कि न्यायपालिका को अपनी सीमा से परे अतिक्रमण के खिलाफ सतर्क रहना चाहिए क्योंकि उस पर एकमात्र प्रतिबंध आत्म-संयम का स्व-अधिरोपित अनुशासन है। स्वतंत्रता और संविधान का पालन

न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते समय जवाबदेही और सीमाएं अदालत के फैसलों को संवैधानिक वैधता प्रदान करती हैं। यह न्यायिक समीक्षा की शक्ति और कार्य का सार है जो कानून के शासन को मजबूत और बढ़ावा देता है।

14. परम पूज्य केशवानंद भारती श्रीपदगलवरु बनाम में संवैधानिक पीठ के निर्णय। केरल राज्य और अन्य 1,6, राज्य

राजस्थान और अन्य बनाम। भारत संघ और अन्य ", आई. आर. कोएल्हो (मृत) एल. आर. द्वारा। वी. तमिलनाडु राज्य 1 8 और तमिलनाडु राज्य v.

15 आसिफ हमीद और अन्य बनाम। जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य, 1989 सप. (2) एस. सी. सी. 364 ने ट्रॉप वी. में फ्रैंकफर्टर जे. की असहमतिपूर्ण राय को अनुमोदन के साथ उद्धृत किया। डलेस।

फ्रैंकफर्टर जे. ने कहा था: " शक्ति की सीमाओं और शक्ति के विवेकपूर्ण प्रयोग के बीच के अंतर का सख्ती से पालन करने के लिए-अधिकार के प्रश्नों और विवेक के प्रश्नों के बीच-इस निर्णायक लेकिन सूक्ष्म संबंध की सबसे सतर्क सराहना की आवश्यकता है।

-

दो अवधारणाएँ जो बहुत आसानी से एकजुट हो जाती हैं। इस अंतर का पालन करने के लिए अनुशासित इच्छाशक्ति की आवश्यकता भी कम नहीं है। अलग-थलग रहना और विवेक की कमी को हावी होने देना आसान नहीं है ताकि मामलों के संचालन में जो बुद्धिमानी है, उसके बारे में अपने स्वयं के दृढ़ दृष्टिकोण की अवहेलना की जा सके। लेकिन नीति घोषित करना इस न्यायालय का काम नहीं है। इसे अपनी शक्ति पर सीमाओं के लिए एक कठोर सम्मान का पालन करना चाहिए, और यह अदालत की अपनी धारणाओं को प्रभावी बनाने से रोकता है कि क्या बुद्धिमान या राजनीतिक है। न्यायिक शपथ के पालन में यह आत्म-संयम महत्वपूर्ण है, क्योंकि संविधान ने न्यायाधीशों को निर्णय में बैठने के लिए अधिकृत नहीं किया है। कांग्रेस और कार्यकारी शाखा क्या करती है इसका विवेक "।

17 (1977) 3 एस. सी. सी. 592 18 (2007) 2 एससीसी 1 डी. आर.

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

केरल राज्य ने समान रूप से फैसला सुनाया है कि शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत, हालांकि विशेष रूप से उत्कीर्ण नहीं है, संवैधानिक रूप से स्थापित है।

और मूल संरचना का हिस्सा है क्योंकि इसका विस्तार, संचालन और दृश्यता स्पष्ट है। संविधान ने औपचारिक रेखाएं खींचे बिना, तीन अंगों के बीच सीमांकन किया है, जिसका कर्तव्य न्यायपालिका की सीमाओं की जांच करना है और क्या सीमाओं का उल्लंघन किया गया है या नहीं। ये निर्णय नियंत्रण और संतुलन को शामिल करने वाली संवैधानिक योजना को संदर्भित करते हैं। एक अनुक्रम के रूप में, यह सिद्धांत विधायिका को अदालत के फैसले को अमान्य और अप्रभावी घोषित करने से रोकता है, जबकि विधायिका के पास अभी भी कानून बनाने की विधायी क्षमता है।

कानून को मान्य करना जो निर्णय में बताए गए दोष को दूर करता है। 2 हालाँकि, यह विधानमंडल को किसी कानून को लागू करके किसी निर्णय को अमान्य घोषित करने की अनुमति नहीं देता है, लेकिन विधानमंडल को उस आधार को मौलिक रूप से बदलकर निर्णय के आधार को छीनने की अनुमति देता है जिसके आधार पर इसे घोषित किया गया था। इसलिए, सभी महत्वपूर्ण नियंत्रण और संतुलन कार्यों का प्रयोग करते हुए, प्रत्येक शाखा को उस विशाल जिम्मेदारी के प्रति सचेत रहना चाहिए जो यह सुनिश्चित करने के लिए उन पर टिकी हुई है कि संस्थागत सम्मान और सौहार्द बनाए रखा जाए।

15. बिनॉय विश्वम बनाम। भारत संघ और अन्य 2 1, इस न्यायालय ने संविधान का उल्लेख करते हुए कहा था कि राज्य की तीन शाखाओं द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्तियों का एक स्पष्ट उद्देश्य है और प्रत्येक शाखा को संवैधानिक रूप से अपने क्षेत्र के भीतर कार्य करने और संवैधानिक लक्षय को प्राप्त करने के लिए पारस्परिक संस्थागत सम्मान रखने और यह सुनिश्चित करने के लिए अनिवार्य है कि कोई संवैधानिक उल्लंघन न हो। यह संविधान है जिसने राज्य की तीन शाखाओं का निर्माण किया है और इस प्रकार, प्रत्येक शाखा को अपने क्षेत्र से बाहर कदम नहीं रखते हुए दूसरे को बाध्य करना चाहिए।

16. कल्पना मेहता और अन्य बनाम। भारत संघ और

19 (2014) 12 एस. सी. सी. 696 20 श्री पृथ्वी कॉटन मिल्स लिमिटेड और एक अन्य बनाम। ब्रोच बरो नगरपालिका और अन्य, (1969) 2 एस. सी. सी. 283 21 (2017) 7 एससीसी 59

22 (2018) 7 एससीसी 1 [2019] 12 एस. सी. आर.

शीर्षक। विधायिका के पास कानूनों के लिए एक विशेष अधिकार निहित है जिससे उसे कानून बनाने और बनाने के क्षेत्र में सर्वोच्चता मिलती है, फिर भी यह शक्ति अलग है और इसके बराबर नहीं है

संविधान की मैसी, इस प्रकार:

" 41. इस न्यायालय के पास संवैधानिक प्रावधानों के साथ-साथ वैधानिक प्रावधानों की व्याख्या करने की संवैधानिक शक्ति और अधिकार है। न्यायिक समीक्षा की शक्ति प्रदान करने की बहुत पवित्रता है क्योंकि संवैधानिक न्यायालय के पास किसी भी कानून को असंवैधानिक घोषित करने की शक्ति है यदि संविधान में प्रदान किए गए विधान के क्षेत्र को ध्यान में रखते हुए विधायिका की क्षमता की कमी है या यदि कोई प्रावधान किसी भी मौलिक अधिकार या किसी संवैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करता है या उसके विपरीत चलता है या यदि

एक प्रावधान स्पष्ट रूप से मनमाना है।

17. ऐसा कहने के बाद, मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा ने कहा:

न्यायिक संयम की अवधारणा के प्रति सचेत रहें। न्यायिक समीक्षा का कर्तव्य जो संविधान ने न्यायपालिका को दिया है निर्बाध नहीं; यह न्यायिक संयम की अवधारणा के भीतर आता है। न्यायिक संयम के सिद्धांत के लिए आवश्यक है कि न्यायाधीशों को अपनी शक्ति की परिभाषित सीमाओं के भीतर रहते हुए मामलों का फैसला करना चाहिए। न्यायाधीशों से अपेक्षा की जाती है कि वे संविधान द्वारा निर्धारित सीमाओं के अनुसार किसी भी कानून या संविधान के किसी भी प्रावधान की व्याख्या करें।

इससे पहले, मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा ने कहा था:

" 39. उपरोक्त अधिकारियों से, यह काफी स्पष्ट है कि अवधारणा

संवैधानिक सीमा शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का एक पहलू है। इस स्तर पर, हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि शक्तियों के पृथक्करण के क्षेत्र में वास्तव में कोई संकीर्ण दृष्टिकोण नहीं हो सकता है जब मुद्दों में लोकतंत्र, आवश्यक नैतिकता शामिल हो। जो संविधान, पर्यावरण, सामाजिक हित के निर्वाह आदि जैसे कुछ क्षेत्रों में नागरिकों के हित और चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों से संबंधित मामलों में जनता को सूचना के अधिकार या जानने के अधिकार के साथ सशक्त बनाता है। ऐसे कई उदाहरण हो सकते हैं जहां इस न्यायालय ने कार्यपालिका को निर्देश जारी किए हैं और मौलिक अधिकारों की सुविधा और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए दिशा-निर्देश भी तैयार किए हैं और कभी-कभी

वैधानिक अधिकारों को साकार और फलदायी बनाना। डॉ.

18. डी. वाई. चंद्रचूड़, जे., अपने अलग और सहमत निर्णय में

अपने लिए और ए. के. सीकरी, जे. ने कल्पना मेहता (ऊपर) में सूक्ष्म 'कार्यात्मक पृथक्करण के सिद्धांत' का उल्लेख किया था जो पीटर ए. गेरेंजेलोस के लेखों/पुस्तकों में 'द सेपरेशन ऑफ पॉवर्स एंड लेजिस्लेटिव इंटरफेरेंस इन ज्यूडिशियल' शीर्षक से व्यक्त किया गया है। प्रोसेस, कांस्टीटचूशनल प्रिंसिपल्स एंड लिमिटेशंस 223 '2,3, एम. जे. सी. विले की पुस्तक' कांस्टीटचूशनलिस्म एंड द सेपरेशन ऑफ पॉवर्स '24, ऐलीन कवनाघ ने अपनी पुस्तक' द कांस्टीटचूशनल सेपरेशन ऑफ पॉवर्स 1 25 'में और इयोन कैरोलन ने अपनी पुस्तक' द न्यू सेपरेशन ऑफ पॉवर्स-ए थ्योरी फॉर द मॉडर्न स्टेट 'में लिखा है। 26. इन लेखकों के संदर्भ में

आधुनिक प्रशासनिक राज्य ने दो घटकों से मिलकर इस सिद्धांत का पुनर्निर्माण किया है: इसके बजाय श्रम का विभाजन 'और' नियंत्रण और संतुलन '

पृथक विभाजन, तीन अंगों के बीच बातचीत और परस्पर निर्भरता की आवश्यकता को इस तरह से उजागर करके कि प्रत्येक शाखा सहकारी जुड़ाव में हो, लेकिन साथ ही साथ, जब आवश्यक हो, दूसरे पर नियंत्रण करने के लिए कार्य करता है और यह कि लोगों का कोई भी समूह राज्य के तंत्र को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं है। स्वतंत्र न्यायपालिका शक्ति के मनमाने प्रयोग पर एक संयमित प्रभाव के रूप में कार्य करती है। 19. कार्यात्मक सिद्धांत का उल्लेख करते हुए, जे. डी. वाई. चंद्रचूड़ ने निम्नलिखित निर्णयों का हवाला दिया था:

" 249. यू. पी. राज्य बनाम जीत एस. बिष्ट, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत सरकार की प्रत्येक शाखा के "सक्रिय अधिकार क्षेत्र" को सीमित करता है। हालांकि, जब राज्य के किसी अंग के सक्रिय अधिकार क्षेत्र को चुनौती नहीं दी जाती है, तब भी यह सिद्धांत किसी संस्थान को अपने कर्तव्य का निर्वहन करने में अपनी कमियों या ज्यादतियों के बारे में बताने के लिए तरीकों का उपयोग करने की अनुमति देता है। न्यायालय ने माना कि मूल रूप से, सिद्धांत का उद्देश्य अन्य अंगों की गतिविधियों पर नियंत्रण और संतुलन की एक योजना के रूप में कार्य करना है। न्यायालय ने कहा कि शक्तियों के पृथक्करण की आधुनिक अवधारणा इस समझ को स्वीकार करती है कि इसे न केवल राज्य के विभिन्न अंगों के कामकाज के क्षेत्र का सीमांकन करना चाहिए, बल्कि कुछ हद तक, कार्य के उस चित्रित क्षेत्र में न्यूनतम सामग्री को भी परिभाषित करना चाहिए। एस. बी. सिन्हा जे.

प्रशासनिक रूप में सिद्धांत के विकसित होने की आवश्यकता को संबोधित किया

24 ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 1967 25 डेविड डाइजेनहॉस और मैल्कम थोरबर्न (संस्करण), संवैधानिक कानून की दार्शनिक नींव (ऑक्सफोर्ड: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2016) 26 ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2009 [2019] 12 एस. सी. आर.

सामाजिक-आर्थिक अधिकारों के वितरण में निकाय शामिल हैं: (एस. सी. सी पी. 619, पैरा 83)

" 83. यदि हम शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के विकास को देखते हैं, तो पारंपरिक रूप से नियंत्रण और संतुलन का आयाम केवल था सरकारी ज्यादतियों और उल्लंघनों से संबंधित। लेकिन आज के सकारात्मक अधिकारों और न्यायोचित सामाजिक और आर्थिक अधिकारों, संकर प्रशासनिक निकायों, सार्वजनिक कार्यों का निर्वहन करने वाले निजी कार्यकर्ताओं की दुनिया में, हमें अधिक तात्कालिकता के साथ निरीक्षण कार्य करना होगा और सरकारी निष्क्रियता को शामिल करने के लिए नियंत्रण और संतुलन के क्षेत्र को बढ़ाना होगा। अन्यथा हम कल्पना करते हैं कि देश आराम की स्थिति में बदल जाएगा। इसलिए सामाजिक इंजीनियरिंग के साथ-साथ संस्थागत इंजीनियरिंग इस दायित्व का हिस्सा है।

(मूल में जोर)

XX

XX

XX

251. सुप्रीम कोर्ट एडवोकेट्स-ऑन-रिकॉर्ड एसोसिएशन। वी. भारत संघ के न्यायाधीश मदन बी. लोकुर ने कहा कि शक्तियों के पृथक्करण में यह परिकल्पना नहीं की गई है कि राज्य के तीन अंगों- विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका-में से प्रत्येक एक साथ काम करता है। विद्वान न्यायाधीश ने निर्णय दिया: (एस. सी. सी पी. 583, पैरा 678)

" 678. काफी स्पष्ट रूप से संसद की एक पूरी मेजबानी है

और न्यायपालिका पर विधायी जाँच की जाती है जिसके द्वारा

संविधान, लेकिन अगर एक चेक के रूप में एक ओवरलैप है एक आवश्यक या एक बुनियादी कार्य या तत्व के संदर्भ में

राज्य का एक अंग दूसरे के विपरीत, एक संवैधानिक मुद्दा उठती है। यह इस संदर्भ में है कि 99 वां संविधान

संशोधन अधिनियम को देखा जाना चाहिए-क्या यह एक पर प्रभाव डालता है

स्वतंत्रता का मूल या एक आवश्यक तत्व

न्यायपालिका, अर्थात्, इसकी निर्णयात्मक स्वतंत्रता।

20. इसके बाद, डी. वाई. चंद्रचूड़, जे. ने कहा था:

" 254. शक्तियों के पृथक्करण के प्रभाव का आकलन करते समय

वर्तमान विवाद पर, कुछ नियम HWANI KUMAR v होने चाहिए।

भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

तैयार किया गया। विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण संविधान की एक बुनियादी विशेषता है। एक मूलभूत सिद्धांत के रूप में जो मूल संरचना के भीतर निहित है, यह संशोधन करने के लिए घटक शक्ति की पहुंच से बाहर है। इसे प्रतिस्थापित या निरस्त नहीं किया जा सकता है। इस स्थिति को स्वीकार करते हुए, तय किए गए मामले इंगित करते हैं कि भारतीय संविधान सख्त अर्थों में शक्तियों के पृथक्करण को नहीं अपनाता है। इस सिद्धांत के अपवादों के पाठ्यपुस्तक उदाहरणों में अधीनस्थ कानून बनाने की कार्यपालिका की शक्ति, अपने विशेषाधिकारों की अवमानना के लिए दंडित करने की विधायिका की शक्ति और नियम बनाकर अपनी प्रक्रियाओं को विनियमित करने के लिए सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को सौंपा गया अधिकार शामिल हैं। अधीनस्थ विधान बनाने में, कार्यपालिका को विधायिका द्वारा प्रत्यायोजित विधान बनाने का काम सौंपा जाता है, जो उसके नियंत्रण के अधीन होता है। उच्च न्यायपालिका की नियम बनाने की शक्ति में विधायी चरित्र की विशेषताएँ हैं। अपने विशेषाधिकारों की अवमानना के लिए दंडित करने की विधायिका की शक्ति का एक न्यायिक चरित्र है। ये अपवाद इंगित करते हैं कि अलगाव सिद्धांत नहीं किया गया है

हमारे संविधान में सख्त रूप में अपनाया गया। लेकिन इस सिद्धांत का महत्व इसके अभिधारणा में निहित है कि राज्य के एक अंग को सौंपे गए आवश्यक कार्यों का प्रयोग दूसरे द्वारा नहीं किया जा सकता है। अन्य अंगों को सौंपी गई संवैधानिक शक्तियों के दुरूपयोग के खिलाफ खड़े होकर, शक्तियों का पृथक्करण कानून के शासन का समर्थन करता है और सत्तावादी ज्यादतियों के खिलाफ रक्षा करता है।

मूल संरचना सिद्धांत। विधायिका को संवैधानिक रूप से कानून बनाने की शक्ति सौंपी गई है। न्यायालयों को कानून बनाने की शक्ति नहीं सौंपी गई है। फिर भी, एक संवैधानिक लोकतंत्र में, जो संविधान की सर्वोच्चता पर आधारित है, यह न्यायशास्त्र का एक स्वीकृत सिद्धांत है कि न्यायपालिका के पास कानून की वैधता का परीक्षण करने का अधिकार है। जहां अधिनियमित करने वाली विधायिका में विधायी का अभाव है, वहां विधान को अमान्य किया जा सकता है। क्षमता या जहाँ मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होता है। एक कानून जो संवैधानिक रूप से अधिकार से बाहर है, उसे न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए ऐसा घोषित किया जा सकता है। न्यायिक समीक्षा वास्तव में [2019] 12 एस. सी. आर. की बुनियादी विशेषताओं का भी एक हिस्सा है।

सरल कारण यह है कि द्वारा बनाए गए सभी संस्थान संविधान संवैधानिक सीमाओं के अधीन है। द.

विधायिका, यह अच्छी तरह से स्थापित है, केवल यह घोषणा नहीं कर सकती है कि अदालत का निर्णय अमान्य है या यह रद्द कर दिया गया है। अगर

विधायिका को ऐसा करने की अनुमति दी गई थी, यह संवैधानिक सौंप की सीमाओं से परे जाएगी। जबकि अलगाव

शक्तियों का विधानमंडल को केवल एक जारी करने से रोकता है यह घोषणा करते हुए कि कोई निर्णय गलत या अमान्य है, कानून बनाने वाला निकाय एक कानून बनाने का हकदार है जो अदालत द्वारा बताए गए दोषों को दूर करता है। एक कानून का अधिनियमन जो निर्णय के आधार को छीन लेता है (केवल इसे अमान्य करने के विपरीत) अनुमेय है और अलगाव सिद्धांत का उल्लंघन नहीं करता है। वास्तव में ऐसा है

जिस आधार पर विधि को मान्य करने की अनुमति है।

256. यह चर्चा इस निष्कर्ष पर ले जाती है कि जबकि

संवैधानिक संस्कृतियाँ और तंत्र। पृथक्करण सिद्धांत को इसकी मानक विशेषताओं से रहित, इसकी वर्णनात्मक सामग्री तक सीमित नहीं किया जा सकता है। जाहिर है, इसमें मानक और वर्णनात्मक दोनों विशेषताएँ हैं। भारतीय संविधान में इसे लागू करने में, ध्यान में रखने योग्य महत्वपूर्ण नियम यह है कि कोई भी संस्था नहीं है शासन का अधिकार संविधान से ऊपर है। कोई समर्पण नहीं

शक्ति निरपेक्ष है।

. राज्य के तीन अंगों के बीच बातचीत के लिए शक्तियों के पृथक्करण के सैद्धांतिक आधार को स्पष्ट करने के बाद, दोनों के बीच स्पष्ट अंतर करना महत्वपूर्ण होगा।एक ओर न्यायालयों द्वारा निर्णय और निर्णय और दूसरी ओर विधायिका द्वारा शक्ति विधान। निर्णय का परिणाम डी. आर. में होता है।

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

जिसे अक्सर न्यायाधीश द्वारा बनाई गई कानून के रूप में वर्णित किया जाता है, लेकिन निर्णय के दौरान अनुच्छेद 14,19 और 21 के प्रावधानों के अनुसार कानूनों और अधिकारों की व्याख्या एक प्रयास या अधिनियम नहीं है

न्यायाधीशों द्वारा कानून। इस संबंध में एफ. एम. इब्राहिम कलीफुल्ला, जे. द्वारा भारत संघ बनाम में व्यक्त राय का संदर्भ दिया जा सकता है। वी. श्रीहरण उर्फ मुरुगन और अन्य 2 1, जिन्होंने भारतीय दंड संहिता ("आई. पी. सी"., संक्षेप में) की धारा 302 के तहत अपराधों के लिए मृत्युदंड के संदर्भ में कहा था कि सांसदों ने बहुत अधिक विश्वास और विश्वास व्यक्त करते हुए न्यायपालिका की संस्था के साथ अपराध की गंभीरता को तौलने और मापने का काम सौंपा है। यह.

न्याय सुनिश्चित करने के लिए एक न्यायाधीश को सुनहरे तराजू में किए गए अपराध के पक्ष और विपक्ष को तौलने के बाद अपने न्यायिक दिमाग को लागू करने की आवश्यकता होती है। एक तरह से, इसलिए, विधायिका स्वयं न्यायपालिका को उदाहरणों के रूप में मानदंड निर्धारित करने का काम सौंपती है, जिन्हें अक्सर न्यायाधीश द्वारा बनाए गए कानून के रूप में कहा जाता है। यह कई कानूनों के बारे में सच है। ऐसा कानून, भले ही न्यायपालिका द्वारा बनाया गया हो, शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन नहीं करेगा और संवैधानिक कार्यों के अनुरूप है। दोनों के बीच इस अंतर को ऐलीन कवनाघ ने निम्नलिखित शब्दों में उचित रूप से व्यक्त किया है:

" सामान्य तौर पर, नया कानून बनाने की अदालतों की क्षमता और शक्ति आम तौर पर विधायकों की तुलना में अधिक सीमित होती है, क्योंकि अदालतें आम तौर पर मौजूदा कानूनी ढांचे में कमियों को भरकर, मौजूदा सिद्धांतों को मामले-दर-मामले के आधार पर बढ़ाते हुए, उन्हें बदलती परिस्थितियों आदि के साथ समायोजित करके कानून बनाती हैं। न्यायिक कानून बनाने की शक्तियां टुकड़ों में और वृद्धिशील होती हैं और अदालतों को चाहिए

कानून के अनुसार तर्क, इसे विकसित करते समय भी। इसके विपरीत, विधायकों के पास कानून में कट्टरपंथी, व्यापक परिवर्तन करने की शक्ति है, जो मौजूदा कानूनी मानदंडों पर आधारित नहीं हैं।

22. पी. रामचंद्र राव बनाम मामले में इस न्यायालय के सात न्यायाधीश। कर्नाटक राज्य ने संविधान के अनुच्छेद 21,32,141 और 142 की व्याख्या करते हुए यह अभिनिर्धारित किया था कि निर्धारित अवधि जिस पर आपराधिक मुकदमा समाप्त हो जाएगा जिसके परिणामस्वरूप आरोपी को बरी या आरोपमुक्त किया जाएगा, या ऐसे निर्देश देना वर्तमान या भविष्य में सभी मामलों पर लागू होगा, न्यायिक कानून बनाने के बराबर होगा और न्यायिक निर्देशों द्वारा नहीं किया जा सकता है। यह देखा गया कि अदालतें कानून की घोषणा कर सकती हैं, कानून की व्याख्या कर सकती हैं, स्पष्ट खामियों को दूर कर सकती हैं और कमियों को भर सकती हैं, लेकिन वे कानून को लागू नहीं कर सकती हैं।

27 (2016) 7 एससीसी 1

28 (2002) 4 एससीसी 578 [2019] 12 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

कानून का क्षेत्र। अदालतें कानूनों को लागू करने के लिए उचित और बाध्यकारी निर्देश जारी कर सकती हैं, समय सीमा निर्धारित कर सकती हैं या अन्याय को दूर करने के लिए कार्यवाही के लिए एक कैलेंडर तैयार कर सकती हैं और अदालत के संज्ञान में लाए गए तथ्यों के आधार पर दिए गए मामले या मामलों के समूह में उल्लंघन किए गए अधिकारों का ध्यान रख सकती हैं, लेकिन दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अध्याय XXXVI के समान या उसके अनुरूप प्रावधानों को निर्धारित और अधिनियमित नहीं कर सकती हैं। कानून के स्रोत के रूप में कानून के बीच अंतर करते हुए जिसमें एक सक्षम प्राधिकारी द्वारा कानूनी नियमों की घोषणा और सामान्य अनुप्रयोग के सिद्धांतों को निर्धारित करने वाले न्यायाधीशों द्वारा सुनाए गए न्यायिक निर्णय शामिल हैं, सैल्मंड को संदर्भित किया गया था।

न्यायशास्त्र के सिद्धांतों पर (12 वां संस्करण) जो कहता है:

" हमें विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानून और अदालतों द्वारा बनाए गए कानून में अंतर करना चाहिए। विधायक विशुद्ध रूप से भविष्य के लिए और किसी भी वास्तविक विवाद के संदर्भ के बिना नियम निर्धारित कर सकते हैं; अदालतें, जहां तक वे कानून बनाती हैं, ऐसा केवल उनके समक्ष मामलों को लागू करने में ही कर सकती हैं और केवल वहीं तक जो उनके समाधान के लिए आवश्यक हो। न्यायिक कानून बनाना कानूनी विवादों के समाधान के लिए आकस्मिक है; विधायी

कानून बनाना विधायक का केंद्रीय कार्य है।

प्रोफेसर एस. पी. साठे के "भारत में न्यायिक सक्रियता% सीमाओं का उल्लंघन और प्रवर्तन" पर काम का भी उल्लेख किया गया।

सीमाएँ ", न्यायिक सक्रियता की वैधता का मूल्यांकन करते हुए, जिसमें यह देखा गया था:

" निर्देश या तो कानून में कमियों को भरने के लिए जारी किए जाते हैं या उन मामलों के लिए प्रावधान करने के लिए जारी किए जाते हैं जो किसी द्वारा प्रदान नहीं किए गए हैं।

कानून। न्यायालय ने विधायी कार्य को पारंपरिक अंतरालीय अर्थों में नहीं बल्कि खुले तौर पर संभाला है और इसे अपनी भूमिका के एक आवश्यक घटक के रूप में उचित ठहराया है।

संवैधानिक अदालत "। (p.242)
" एक सख्त अर्थ में ये न्यायिक अतिवाद के उदाहरण हैं जो शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत के सामने उड़ते हैं। शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत में परिकल्पना की गई है कि विधायिका को

कानून, कार्यपालिका को इसे निष्पादित करना चाहिए, और न्यायपालिका को मौजूदा कानून के अनुसार विवादों का निपटारा करना चाहिए। वास्तव में ऐसा जलरोधी पृथक्करण कहीं भी मौजूद नहीं है और अव्यवहारिक है। मोटे तौर पर, इसका मतलब है कि राज्य

के एक अंग को ऐसा कार्य नहीं करना चाहिए जो अनिवार्य रूप से दूसरे अंग से संबंधित हो। जबकि खुले डी. आर. के अर्थों की व्याख्या और विस्तार के माध्यम से कानून बनाना।

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

'कानून की उचित प्रक्रिया', 'कानून की समान सुरक्षा', या 'बोलने और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' जैसी मनगढ़ंत अभिव्यक्तियाँ एक वैध न्यायिक कार्य है, निर्देशों के माध्यम से एक पूरी तरह से नया कानून बनाना एक वैध न्यायिक कार्य नहीं है। (p.250)

23. उपरोक्त से, यह स्पष्ट है कि कुछ सीमाओं के भीतर कानून बनाना न्यायाधीश की भूमिका का एक वैध तत्व है, यदि अपरिहार्य नहीं है। 29 एक न्यायाधीश को कानूनी प्रावधानों के आधार पर निर्णय लेना और निर्णय लेना होता है, जो किसी विशेष मुद्दे पर अनिश्चित होने पर स्पष्टीकरण और स्पष्टीकरण की आवश्यकता होती है। 3 0 इसके लिए एक न्यायाधीश से मामले का निर्णय करने के लिए प्रावधानों की व्याख्या करने की आवश्यकता होती है और इस प्रक्रिया में वह सहारा ले सकता है और जीवन के अधिकार सहित मौलिक अधिकारों पर भरोसा कर सकता है, लेकिन फिर भी वह ऐसे प्रावधानों की व्याख्या करते समय किसी कानून का निर्माण नहीं करता है। इस तरह की व्याख्या को न्यायाधीश निर्मित कानून कहा जाता है, लेकिन कानून नहीं। ऐलीन कवनाघ ने उपरोक्त स्थिति की व्याख्या करते हुए कहा था:

" ..... यदि कोई मामला नहीं हुआ है और न्यायाधीश को कानूनी प्रावधानों के आधार पर निर्णय लेना है जो इस मुद्दे पर अनिश्चित हो सकते हैं, तो न्यायाधीश नया कानून बनाए बिना मामले का फैसला नहीं कर सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि संसद ने अधिनियम को व्यापक रूप से तैयार किया है, जिसे प्रत्येक नए मामले की परिस्थितियों में लागू करने के लिए अनिवार्य रूप से अदालतों द्वारा विस्तार की आवश्यकता होती है। दूसरा, उन मामलों में भी जहां न्यायाधीश मौजूदा कानून को लागू करते हैं, वे इस सवाल का सामना करने से नहीं बच सकते हैं कि क्या इसे बदलना और सुधारना है।

व्याख्या का एक व्यावहारिक और रचनात्मक पहलू है।

कानून बनाने या कानून बनाने में कुछ राजनीतिक, नैतिक और सामाजिक मूल्यों को प्राथमिकता देने का विकल्प शामिल है। वे विकल्प जो विधायिका के समक्ष मौजूद हैं। यह विविध और वैकल्पिक मूल्यों को अभिव्यक्ति/अर्थ देने और इसे इस तरह से मिश्रित करने के लिए एक संतुलन और एकीकरण अभ्यास है कि यह कई दृष्टिकोणों का प्रतिनिधि है ताकि इसे पारित करने के लिए अन्य निर्वाचित प्रतिनिधियों से समर्थन प्राप्त हो सके।

संस्थागत समावेश और स्वीकृति। विधान, एक अधिनियम या कानून के रूप में, व्यापक और सामान्य सिद्धांतों को निर्धारित करता है। यह कानून का स्रोत है जिसे न्यायाधीशों को लागू करने के लिए कहा जाता है। न्यायाधीश, जब वे कानून लागू करते हैं, तो वे भाषा के नियमों और अच्छी तरह से पहचाने गए पृष्ठभूमि अनुमानों द्वारा विवश होते हैं कि किस तरीके से

29 लॉर्ड इरविन: ' सक्रियता और संयम - मानवाधिकार और व्याख्यात्मक प्रक्रिया ', (1999) 4 ईएचआरएलआर 350 ऐलीन कवनाघ: ' मानवाधिकार अधिनियम 1998 '(2004) के तहत व्याख्या और विधान के बीच मायावी विभाजन 24 ऑक्सफोर्ड जर्नल ऑफ लीगल स्टडीज, 259-285 [2019] 12 एस. सी. आर.

विधायिका का इरादा कानून को पढ़ने का था। न्यायाधीशों द्वारा कानून का अनुप्रयोग विधायिका द्वारा कानून के अधिनियमन का पर्याय नहीं है। न्यायाधीशों के पास यह बताने की शक्ति है कि किसी विशेष मामले में क़ानून कितना सटीक रूप से लागू होगा। इस तरह, वे द्वारा तैयार किए गए कानून को पूरा करते हैं

इसे लागू करके विधायिका। व्याख्या की इस शक्ति या न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग कानून के अधिनियमन के बाद किया जाता है, जिसे फिर अदालतों के समक्ष व्याख्या या चुनौती का विषय बनाया जाता है।

24. विधायिका, एक संस्था और सरकार की एक शाखा के रूप में, बड़े सामाजिक समुदाय का एक सूक्ष्म जगत है, जिसमें कुछ गुण हैं -

संरचना, विविधता और जवाबदेही के संदर्भ में लोकतांत्रिक संस्था। विधायिका प्रतिनिधित्व और संसाधनों की प्रचुरता लाने के लिए सावधानीपूर्वक डिज़ाइन की गई और अपनाई गई अंतर्निहित प्रक्रियाओं का उपयोग करती है क्योंकि उनके पास संस्था के भीतर और बाहर कार्यपालिका के रूप में काम करने वाले लोगों की जानकारी, कौशल, विशेषज्ञता और ज्ञान तक पहुंच होती है। 331 विधान और न्यायिक निर्णय की प्रक्रिया और विधि पूरी तरह से अलग हैं। न्यायिक निर्णय में व्याख्या के नियमों और पूर्ववर्ती कानूनों को लागू करना शामिल है और एक व्यक्तिगत न्यायाधीश या पीठ की गहरी समझ, ज्ञान और विवेक के बावजूद, अपनी व्यापक और व्यापक विविध राजनीति को देखते हुए, इसे एक लोकतांत्रिक समाज में कानून बनाने के साथ नहीं जोड़ा जा सकता है। संविधान में कहा गया है कि विधायिका सर्वोच्च है और जब वह विकल्पों और विकल्पों पर विचार करती है तो कानून के मामलों में उसका अंतिम निर्णय होता है

विभिन्न वर्गों से इनपुट के साथ, लोकतांत्रिक जवाबदेही के रूप में एक जांच के साथ और अदालतों द्वारा आगे की जांच जो प्रयोग करते हैं

आधुनिक संसदीय लोकतंत्र, संविधान एक अन्य शाखा के कार्यों के प्रयोग को प्रतिबंधित करता है जिसके परिणामस्वरूप संवैधानिक जवाबदेही के शासन को छीन लिया जाता है। केवल तभी जब जवाबदेही बरकरार रखी जाए, शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का कोई उल्लंघन नहीं होगा। संविधान न केवल यह माँग करता है और आदेश देता है कि सही निर्णय होने चाहिए जो हमें नियंत्रित करते हैं, बल्कि समान रूप से ध्यान रखा जाना चाहिए कि सही निर्णय सही तरीके से लिए जाएं।

331 डी. किरित्सिस, एक प्रतिनिधि लोकतंत्र में संवैधानिक समीक्षा (2012) 32 ऑक्सफोर्ड जर्नल ऑफ लीगल स्टडीज

32 एयरडेल एन. एच. एस. ट्रस्ट बनाम में लॉर्ड ब्राउन-विल्किंसन। ब्लैंड [1993] एसी 789 (पी। 879-880) 33 (2010) 5 एससीसी 538 डी. आर.

सही निकाय और संस्था द्वारा बनाया गया। यह वही है जो वैधता देता है, चाहे वह कानून हो, नीतिगत निर्णय हो या अदालत का निर्णय।

25. कभी-कभी यह बलपूर्वक तर्क दिया जाता है कि अलोकप्रिय और कठिन निर्णयों को न्यायाधीशों द्वारा अधिक आसानी से समझा और लिया जाता है।

अन्य दो पंखों से। वास्तव में, ऐसे सुझाव अप्रत्यक्ष रूप से दिए गए थे। यह तर्क इस विश्वास पर आधारित है कि न्यायाधीश सीधे मतदाताओं के प्रति जवाबदेह नहीं हैं और इसलिए, इस समय के प्रश्नों से सापेक्ष स्वतंत्रता का आनंद लेते हैं, जो उन्हें एक अलग, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण दृष्टिकोण रखने में सक्षम बनाता है। 3 4 यह स्थिति कि न्यायाधीश निर्वाचित नहीं होते हैं और

जवाबदेह सही है, लेकिन यह न्यायिक विधान की प्रकृति में एक अदालत द्वारा एक आदेश को उचित नहीं ठहराएगा क्योंकि यह संवैधानिक सर्वोच्चता का उल्लंघन करेगा और लोकतांत्रिक प्रक्रिया को अमान्य और नष्ट कर देगा जिसके द्वारा कानून बनाए जाते हैं। ऊपर बताए गए कारणों से, यह तर्क संवैधानिक रूप से अस्वीकार्य और असमर्थनीय है।

26. कल्पना मेहता के मामले में मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा ने 'न्यायिक समीक्षा की शक्ति' शीर्षक के तहत इसके कई फैसलों की जांच की थी।

न्यायालय उच्च न्यायालयों में न्यायिक शक्ति के प्रभावशाली विस्तार पर विचार करेगा जिसके लिए न्यायालयों द्वारा जबरदस्त जिम्मेदारी के प्रयोग की आवश्यकता होती है और इसकी मांग की जाती है। इस प्रकार, व्याख्यात्मक शक्ति का प्रयोग करते समय, अदालतें संवैधानिक मूल्यों को महसूस करने के लिए संविधान की भावना और अंतर्निहित तत्वों से ताकत प्राप्त कर सकती हैं, लेकिन न्यायिक संयम की अवधारणा के प्रति जीवित रहना चाहिए, जिसके लिए न्यायाधीशों को शक्ति की परिभाषित सीमाओं के भीतर मामलों का फैसला करने की आवश्यकता होती है। इस प्रकार, अदालतें प्रस्तुतियों को स्वीकार नहीं करेंगी और विशुद्ध रूप से नीति के मामले पर आदेश पारित नहीं करेंगी या न्यायिक कानून नहीं बनाएंगी जो लोगों के कार्यकारी या निर्वाचित प्रतिनिधियों को लागू करने के लिए है। इस न्यायालय के कुछ निर्णयों का उल्लेख निम्नलिखित शब्दों में किया गया था:

" 43. एस. सी. चंद्र बनाम झारखंड राज्य में यह निर्णय दिया गया है कि न्यायपालिका को संयम बरतना चाहिए और आम तौर पर विधायी क्षेत्र में अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। इस संबंध में, एक संदर्भ

सुरेश सेठ बनाम में तीन न्यायाधीशों की पीठ का निर्णय। इंदौर

नगर निगम। काफी शिक्षाप्रद है। उक्त मामले में, इस न्यायालय के समक्ष एम. पी. नगर निगम अधिनियम, 1956 में उचित संशोधन के लिए निर्देश जारी करने का अनुरोध किया गया था। इस निवेदन को खारिज करते हुए अदालत ने कहा कि यह विशुद्ध रूप से नीति का विषय है जो लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधियों को तय करना है

34 रेजिना (निकलिंसन) और अनदर वी में लॉर्ड न्यूबर्गर के अवलोकन देखें। न्याय मंत्रालय और अन्य [2014] यूकेएससी 38 [2019] 12 एस. सी. आर.

और इस संबंध में न्यायालय द्वारा कोई निर्देश जारी नहीं किया जा सकता है। न्यायालय ने आगे कहा कि यह न्यायालय विधायिका को किसी विशेष प्रकार का अधिनियम बनाने के लिए निर्देश जारी नहीं कर सकता है। इस संदर्भ में, न्यायालय ने कहा कि हमारी संवैधानिक योजना के तहत, संसद और विधानसभाएं कानून बनाने के लिए संप्रभु शक्ति का प्रयोग करती हैं और कोई भी बाहरी शक्ति या प्राधिकरण किसी विशेष प्रकार का कानून बनाने के लिए निर्देश जारी नहीं कर सकता है। ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए, न्यायालय ने उच्चतम न्यायालय के कर्मचारी कल्याण में निर्णय का उल्लेख किया

एस. एन. वी. भारत संघ जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था कि कोई भी न्यायालय किसी विधायिका को किसी विशेष कानून को लागू करने का निर्देश नहीं दे सकता है और इसी तरह जब कोई कार्यकारी प्राधिकरण विधायिका के प्रत्यायोजित प्राधिकरण के अनुसार अधीनस्थ कानून के माध्यम से विधायी शक्ति का प्रयोग करता है, तो ऐसे कार्यकारी प्राधिकरण को एक कानून बनाने के लिए नहीं कहा जा सकता है जिसे उसे प्रत्यायोजित प्राधिकरण के तहत करने का अधिकार दिया गया है।

27. यह तर्क दिया जा सकता है कि ऐसे अवसर आए हैं जब इस न्यायालय ने 'कानून' बनाया है जिसे सख्ती से शुद्ध माना जा सकता है।

व्याख्या या न्यायिक समीक्षा लेकिन यह उन मामलों में हुआ है जहां संवैधानिक न्यायालयों ने मौलिक अधिकारों की व्याख्या करने के वैध मार्ग पर, एक उद्देश्य के साथ उदारता से काम किया है

व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करें ताकि किसी भी व्यक्ति या नागरिक के साथ अन्याय न हो, जैसा कि कल्पना मेहता के मामले में मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा के फैसले के पैराग्राफ 46 में देखा गया है। दूसरा, ये निर्देश कानून बनाने वाली विधायिका के अधीन और केवल उस रिक्तता को भरने के लिए दिए गए थे जब तक कि विधायिका इसे कानून बनाने के लिए नहीं लेती। ये निर्णय मौलिक अधिकारों के घोर उल्लंघन पर आधारित थे जो कानून/दिशानिर्देशों की कमी या अनुपस्थिति को देखते हुए देखे गए थे। ये निर्देश अंतरिम प्रकृति के थे और इन्हें संसद या राज्य विधानमंडल द्वारा लागू किए जाने तक लागू किया जाना था और ये केवल एक विराम-अंतराल व्यवस्था थी। विशाखा (उपरोक्त) के मामले में कुछ मामलों में ये दिशानिर्देश और निर्देश 'कार्यस्थल पर महिलाओं का यौन उत्पीड़न (रोकथाम, निषेध और निवारण) अधिनियम, 2013' के अधिनियमन तक लंबे समय तक जारी रहे थे। क्योंकि विधायिका (इसमें कार्यपालिका भी शामिल होगी) ने निहित और मौन रूप से उक्त कानून की आवश्यकता को स्वीकार किया था, भले ही न्यायपालिका द्वारा कानून बनाए बिना बनाया गया हो। ऐसा कानून जब द्वारा अधिनियमित किया जाता है

संसद या राज्य विधानमंडल, भले ही न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों या दिशा-निर्देशों के विपरीत हो, द्वारा निरस्त नहीं किया जा सकता है

निर्देशों/दिशानिर्देशों के कारण; इसे केवल तभी निरस्त किया जा सकता है जब यह डी. आर. के अनुच्छेद 14 के तहत मौलिक अधिकारों या समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है।

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

संविधान। ये असाधारण मामले हैं जहां संस्थागत कारणों और शक्ति विभाजन के बावजूद, इस न्यायालय ने सामान्य नियम/दिशानिर्देश निर्धारित किए हैं जब एक स्पष्ट, ठोस और सकल मानवाधिकार उल्लंघन हुआ है, जो शक्तियों के पृथक्करण, विशेषज्ञता की कमी और परिणामों की अनिश्चितता के आधार पर किसी भी वैध चिंताओं को काफी अधिक भारी और बौना कर देता है। 3 5 सकल पर्यावरणीय क्षरण और प्रदूषण के मामलों में भी यही स्थिति है। हालांकि, केवल मानवाधिकारों के उल्लंघन का आरोप या पर्यावरण को बढ़ावा देने वाली याचिका

यह मानने के लिए चिंताएं 'उज्ज्वल रेखा' नहीं हो सकती हैं कि आत्म-संयम को न्यायिक कानून को रास्ता देना चाहिए। अदालत के निर्देश कहाँ और कब होने चाहिए

जारी किए गए प्रश्न और मुद्दे संवैधानिक दुविधाओं से जुड़े हैं जो एक बड़ी बहस और चर्चा को अनिवार्य करते हैं (फ्रैंकफर्टर जे. की टिप्पणियाँ देखें जैसा कि आसिफ हमीद और अन्य बनाम में उद्धृत किया गया है। जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य फुट नोट में 15 ऊपर)।

28. इस तरह के निर्देश बहुत सावधानी के साथ जारी किए जाने चाहिए और

निरीक्षण और निश्चित रूप से तब नहीं जब मामला पहले से ही कार्यपालिका या संसद के साथ विचार और बहस के लिए लंबित हो। यह ऐसा मामला नहीं है जिसमें कानून बनाने की आवश्यकता के लिए सुझाव देने के लिए अदालत के हस्तक्षेप की आवश्यकता होती है क्योंकि मामला पहले से ही सक्रिय रूप से विचाराधीन है। इस स्तर पर किसी भी निर्देश की व्याख्या कानून के अधिनियमन में न्यायिक भागीदारी के रूप में की जाएगी। यह न्यायालय उच्चतम न्यायालय कर्मचारी कल्याण संघ बनाम। भारत संघ और अन्य 3,6 ने निर्देश दिया था कि कोई भी अदालत विधायिका को किसी विशेष कानून को लागू करने का निर्देश नहीं दे सकती है। इसी तरह, जब कोई कार्यकारी प्राधिकरण विधायिका के प्रत्यायोजन प्राधिकरण के अनुसार अधीनस्थ कानून के माध्यम से विधायी शक्ति का प्रयोग करता है, तो ऐसे कार्यकारी प्राधिकरण को एक कानून बनाने के लिए नहीं कहा जा सकता है जिसे उसे प्रत्यायोजित प्राधिकरण के तहत करने का अधिकार दिया गया है। एक बार फिर, हम कल्पना मेहता के मामले में मुख्य न्यायाधीश दीपक मिश्रा से उद्धृत करेंगे, जिसमें यह कहा गया था:

" 44. हाल ही में, जनगणना आयोग में। वी. आर. कृष्णमूर्ति, न्यायालय, प्रीमियम ग्रेनाइट्स बनाम का उल्लेख करने के बाद। स्टेट ऑफ टी. एन., एम. पी. ऑयल

निष्कर्षण v. एम. पी. राज्य, एम. पी. राज्य बनाम नर्मदा बचाओ

आंदोलन और पंजाब राज्य बनाम। राम लुभाया बग्गा, आयोजित: (आर.

कृष्णमूर्ति मामला, एस. सी. सी. पी. 809 , पैरा 33)

35 ऐलीन कवनाघ, न्याय की खोज में न्यायिक संयम (2009) ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय कानूनी अनुसंधान पेपर श्रृंखला देखें।

" 33. कानून की उपरोक्त घोषणा से, यह दोपहर के रूप में स्पष्ट है कि यह जांच शुरू करना अदालतों के अधिकार क्षेत्र में नहीं है कि क्या कोई विशेष सार्वजनिक नीति बुद्धिमान है।

संविधान। कुछ मामलों में, जैसा कि अक्सर कहा जाता है, राय और राय हो सकती है (एस. आई. सी.) लेकिन अदालत से किसी राय पर अपीलीय प्राधिकरण के रूप में बैठने की उम्मीद नहीं की जाती है।" 29. वी. के. नसवा बनाम गृह सचिव, भारत संघ और

अन्य 3 7, इस न्यायालय ने स्पष्ट और स्पष्ट शब्दों में कहा था कि हम प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विधायिका को निर्देश जारी नहीं करते हैं और

यदि इस तरह के निर्देश जारी किए जाते हैं तो यह अनुचित होगा। यह शक्ति से बाहर है

विधायिका को एक विशेष तरीके से कानून बनाने के लिए निर्देश जारी करने के लिए न्यायिक समीक्षा, क्योंकि संविधान अदालतों को नीति के मामलों में कार्यपालिका को निर्देश देने और सलाह देने की अनुमति नहीं देता है। संसद, विधायिका के रूप में, एक कानून बनाने के लिए इस शक्ति का प्रयोग करती है और कोई भी बाहरी प्राधिकरण किसी विशेष कानून को जारी नहीं कर सकता है। यह केवल असाधारण मामलों में है जहां एक शून्य और गैर-मौजूदा स्थिति है कि न्यायपालिका, अपनी संवैधानिक शक्ति का प्रयोग करते हुए, तब तक कदम उठाती है और समाधान प्रदान करती है जब तक कि विधायिका अपनी भूमिका निभाने के लिए आगे नहीं आती है।

30. हिमाचल प्रदेश राज्य में और अन्य बनाम। सतपाल सैनी 3 8, इस न्यायालय ने उच्च न्यायालय द्वारा राज्य अधिनियम के प्रावधानों में संशोधन करने के लिए दिए गए निर्देशों को पलट दिया था, जिसे गैर-कृषक हिमाचलों की बड़ी आबादी की दुर्दशा के रूप में वर्णित किया गया था। संदर्भ दिया गया था

उच्चतम न्यायालय कर्मचारी कल्याण संघ (उपर्युक्त) को कि किसी विशेष विधान को अधिनियमित करने के लिए विधायिका को कोई आदेश पत्र जारी नहीं किया जा सकता है और न ही कार्यपालिका को ऐसा निर्देश जारी किया जा सकता है जो अधीनस्थ विधान की प्रकृति में नियम बनाने की शक्तियों का प्रयोग करता है। वी. के. नसवा (उपरोक्त) को भी संदर्भित किया गया था जिसमें पहले के कई निर्णयों पर विचार किया गया था और यह माना गया था कि अदालतों की भूमिका बहुत सीमित है और इसके अभ्यास में, यह न्यायिक कानून बनाने के लिए खुला नहीं है।

इसके अलावा, अदालतों के पास किसी विशेष तरीके से कानून बनाने के लिए विधायिका को निर्देश जारी करने की क्षमता नहीं है। मनोज नरूला बनाम में संवैधानिक पीठ के फैसले का भी संदर्भ दिया गया था। संघ

37 (2012) 2 एस. सी. सी. 542 38 (2017) 11 एस. सी. सी. 42 अश्विनी कुमार बनाम।

भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

डाय 3 9 39 जिसमें गैंडा और अन्य बनाम में दो न्यायाधीशों द्वारा एक विसंगत टिप्पणी की गई। दिल्ली नगर निगम और अन्य ने यह कहते हुए संविधान के विपरीत होना चाहिए कि लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8 में संशोधन किया जाना चाहिए या नहीं, यह निर्णय पूरी तरह से संसद के अधिकार क्षेत्र में है और,इसके अलावा, इस न्यायालय द्वारा कोई निर्देश जारी नहीं किया जा सकता है। यह देखा गया:

" 6. हमर विचारमे एहि शिकायतक एकटा ठोस संवैधानिक आधार अछि। उच्च न्यायालय ने उपरोक्त निर्देश जारी करते समय संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा की शक्ति पर तय की गई सीमाओं के विपरीत काम किया है। एक निर्देश, यह अच्छी तरह से तय किया गया है, विधायिका को कानून बनाने के लिए जारी नहीं किया जा सकता है। कानून बनाने की शक्ति एक पूर्ण संवैधानिक शक्ति है।

जो संविधान के अनुच्छेद 245 और 246 के तहत संसद और राज्य विधानमंडलों में निहित है। संप्रभु विधायी शक्ति के भंडार के रूप में विधायिका को यह निर्धारित करने का अधिकार है कि कोई कानून बनाया जाना चाहिए या नहीं। शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत अदालत को सौंपता है विधायिका द्वारा अधिनियमित किसी कानून की वैधता पर निर्णय लेने का संवैधानिक कार्य, जहां अनुच्छेद 226 (या अनुच्छेद 32 के तहत इस न्यायालय) के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष इस आधार पर चुनौती दी जाती है कि कानून में विधायी क्षमता का अभाव है या इसे संवैधानिक प्रावधान के उल्लंघन में अधिनियमित किया गया है। लेकिन न्यायिक समीक्षा मूल संवैधानिक कार्य का अतिक्रमण नहीं कर सकती है जो यह निर्धारित करने के लिए विधायिका को सौंपा गया है कि कोई कानून बनाया जाना चाहिए या नहीं। क्या अधिनियमित कानून का कोई प्रावधान कानून के उद्देश्य को कम करता है या इसमें संशोधन किया जाना चाहिए, यह विधायी नीति का विषय है। न्यायालय विधायिका को या तो कोई कानून बनाने या उस कानून में संशोधन करने का निर्देश नहीं दे सकता है जिसे उसने इस साधारण कारण से अधिनियमित किया है कि यह संवैधानिक कार्य विधायिका के अनन्य अधिकार क्षेत्र में है। न्यायालय के लिए हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की तरह किसी कानून में संशोधन का आदेश देना राज्य की दूसरी शाखा को सौंपी गई शक्ति का स्पष्ट रूप से दुरूपयोग है। हो सकता है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि उच्च न्यायालय ने उल्लंघन किया है

कानून में संशोधन के लिए राज्य विधानमंडल को उपरोक्त निर्देश जारी करके अनुच्छेद 226 के तहत न्यायिक समीक्षा की शक्ति पर लगाई गई सीमाएं। सरकार की सामूहिक जिम्मेदारी है

राज्य विधानमंडल के लिए। राज्य विधानमंडल में शामिल हैं -

4) 9 एससीसी 1

निर्वाचित प्रतिनिधि। कानून बनाने वाले निकाय को समाज के सामने आने वाली समस्याओं से निपटने और चिंता के मुद्दों को हल करने के लिए आवश्यक कानून बनाने की शक्ति सौंपी गई है। अदालतें विधायी मामलों पर निर्णय नहीं देती हैं।

उपयुक्तता या विधायी नीति पर। यह स्थिति अच्छी तरह से स्थापित है।

चूंकि उच्च न्यायालय इस पर ध्यान देने में विफल रहा है, इसलिए हम इस विषय पर पूर्ववर्ती से उभरने वाले सिद्धांतों को संक्षेप में दोहराएंगे। 7. मल्लिकार्जुन राव बनाम। एपी राज्य और वी. के. सूद बनाम विभाग. नागरिक उड्डयन विभाग के इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 226 के तहत न्यायालय को कार्यपालिका को अपने कानून का प्रयोग करने का निर्देश देने की कोई शक्ति नहीं है

शक्ति बनाना।

8. राज्य में एच. पी. बनाम. मेडिकल कॉलेज के एक छात्र के माता-पिता ने इस न्यायालय ने कानून बनाने के लिए विधायिका को निर्देश जारी करने की प्रथा की निंदा की: (एस. सी. सी पी. 174, पैरा 4)

" 4. ..... डिवीजन बेंच द्वारा दिया गया निर्देश वास्तव में राज्य सरकार को कानून बनाने के लिए मजबूर करने के अप्रत्यक्ष प्रयास से कम नहीं था।

रैगिंग की बुराई "।

आसिफ हमीद बनाम में भी इसी सिद्धांत का पालन किया गया था। जम्मू और कश्मीर राज्य जहाँ इस न्यायालय ने कहा कि: (एस. सी. सी पी. 374, पैरा 19)

" 19. ..... संविधान न्यायालय को नीति के मामले में कार्यपालिका को निर्देश या सलाह देने या संविधान के तहत विधायिका या कार्यपालिका के दायरे में आने वाले किसी भी मामले में उपदेश देने की अनुमति नहीं देता है।

भारत संघ में v. एसोसिएशन। लोकतांत्रिक सुधारों के लिए इस न्यायालय ने कहा कि: (एस. सी. सी पी. 309, पैरा 19)

“ 19. ..... इस न्यायालय के लिए अधिनियम या सांविधिक नियमों में संशोधन के लिए कोई निर्देश देना संभव नहीं है। अधिनियम और नियमों में संशोधन करना संसद का काम है।

XX

XX

XX

12. न्यायपालिका राज्य की तीन शाखाओं में से एक है; अन्य दो कार्यपालिका और विधायिका हैं। तीनों शाखाओं में से प्रत्येक सह-समान है। प्रत्येक ने संवैधानिक शक्तियों को निर्दिष्ट और सूचीबद्ध किया है। न्यायपालिका को अश्विनी कुमार बनाम का कार्य सौंपा गया है।

भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

यह सुनिश्चित करने के लिए कि कार्यकारी कार्य कानून के अनुरूप हैं और

कानून और कार्यकारी निर्णय संविधान के अनुरूप होते हैं। अदालतें नीति नहीं बनाती हैं या यह आदेश नहीं देती हैं कि किसी विशेष नीति का पालन किया जाना चाहिए। नीतियों को तैयार करने का कर्तव्य कार्यपालिका को सौंपा गया है जिसकी जवाबदेही विधायिका और उसके माध्यम से लोगों के प्रति है। गलत नीति अपनाने का खतरा लोगों के प्रति लोकतांत्रिक जवाबदेही में निहित है। यह अभिनिर्धारित करने का आधार और तर्क है कि न्यायालय के पास कार्यपालिका को किसी विशेष नीति को अपनाने का निर्देश देने की शक्ति या कार्य नहीं है या

विधायिका इसे अधिनियमित कानून में परिवर्तित करे। हमें इन सीमाओं की याद दिलाना बुद्धिमानी है और बिना किसी अपवाद के उन्हें लागू करना बुद्धिमानी है।

31. वर्तमान मामले के तथ्यों पर और भी अधिक प्रत्यक्ष रूप से हम में से एक, (न्यायमूर्ति रंजन गोगोई, मुख्य न्यायाधीश) द्वारा एक ही कारण से सलाह दी जाएगी: ए रजिस्टर्ड सोसाइटी v. भारत संघ 1 से

विंग प्रभाव:

" 18. इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि संशोधन के माध्यम से मौजूदा कानून में बदलाव की मांग करने का संसदीय विवेक विधायिका के अनन्य अधिकार क्षेत्र में निहित है और इस संबंध में विधायी विशेषाधिकार के प्रयोग पर कोई राय व्यक्त करना न्यायालय का प्रांत नहीं है। संशोधन विधेयक का प्रारूपण; संसद को उसी का संदर्भ

स्थायी समिति; उक्त द्वारा उस पर विचार

समिति; आगे उठाए जाने वाले कदमों और उनकी समय-सीमा के साथ तैयार की गई रिपोर्ट आवश्यक विधायी कार्य हैं जिन्हें सामान्य रूप से अधीन नहीं किया जाना चाहिए

न्यायालय का हस्तक्षेप या हस्तक्षेप। संवैधानिक शक्तियों के पृथक्करण और सीमांकन का सिद्धांत

संवैधानिक ढांचे के तहत कार्यपालिका, विधानमंडल और न्यायपालिका के संबंधित अधिकार क्षेत्र न्यायालय का नेतृत्व करेंगे। इस निष्कर्ष तक कि अधिनियम के संशोधन की कवायद, जो वर्तमान में चल रही है, को न्यायालय के किसी भी हस्तक्षेप के बिना पूरा करने की अनुमति दी जानी चाहिए। इस मोड़ पर कोई भी अन्य दृष्टिकोण और कोई भी हस्तक्षेप, इस बुनियादी संवैधानिक सिद्धांत को नकार देगा कि कानून बनाने के क्षेत्र में विधायिका सर्वोच्च है। ऐसी स्थिति में इसे व्यवहार्य बनाने के लिए एक क़ानून को पढ़ें जहाँ

कानून के संशोधन का अभ्यास लंबित है, यह भी उचित नहीं होगा। एक धारणा, हालांकि मजबूत, की आसन्न आवश्यकता के बारे में

अधिनियम में निहित कानून और एक लोकतांत्रिक देश के नागरिकों पर इसके लाभकारी प्रभाव, अपने आप में, न्यायालय को अपने अधिकार क्षेत्र को पार करने की अनुमति नहीं देंगे। न्यायिक अनुशासन को न्यायालय को सावधान करना चाहिए

इस तरह के दृष्टिकोण के खिलाफ "।

32. जब मामला पहले से ही विचाराधीन है और कानून के उद्देश्य के लिए जांच की जा रही है, तो यह उचित नहीं होगा

यह न्यायालय अपनी राय को लागू करने के लिए, चाहे वह किसी निर्देश के रूप में हो या यहां तक कि एक अनुरोध के रूप में, क्योंकि यह स्पष्ट रूप से सौंपी गई भूमिका को कमजोर और विवादित करेगा।

संविधान के तहत न्यायपालिका को। इस संबंध में, हम रेजिना (कंट्रीसाइड एलायंस) और अन्य बनाम में लॉर्ड बिंघम के अवलोकन का उल्लेख कर सकते हैं। महान्यायवादी और एक अन्य 2, हालांकि एक अलग संदर्भ में बनाया गया है, निम्नलिखित प्रभाव के लिए:

" ..... यदि नैतिक और राजनीतिक निर्णय के सवाल पर, अधिनियम के विरोधियों को सफलता मिलती है, तो लोकतांत्रिक प्रक्रिया को बाधित किया जा सकता है। अदालतों के माध्यम से वे संसद में क्या हासिल नहीं कर सके।"

33. वर्तमान स्थिति का सामना करते हुए न्यायमित्र श्री कॉलिन गोंजाल्विस ने कहा था कि कार्यपालिका को संयुक्त राष्ट्र समझौते की पुष्टि करने के लिए निर्देश दिए जा सकते हैं। हमें नहीं लगता कि इसके लिए ऐसा कोई निर्देश जारी किया जा सकता है जो वस्तुतः संयुक्त राष्ट्र समझौते के अनुरूप कानून बनाने के लिए निर्देश जारी करने के बराबर होगा।

न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते समय 'अधिकार' नहीं रखते हैं।

34. श्री के. के. वेणुगोपाल, विद्वान महान्यायवादी, अपने लेख में

प्रस्तुतियों में उचित रूप से आग्रह किया गया है कि संविधान का अनुच्छेद 253, जो अंतर्राष्ट्रीय समझौतों को प्रभावी बनाने के लिए कानून बनाने से संबंधित है, संसद को संविधान के अध्याय 11 के पूर्वगामी प्रावधानों में कुछ भी निहित होने के बावजूद, किसी भी संधि, समझौते या सम्मेलन को लागू करने के लिए भारत के क्षेत्र के पूरे या किसी भी हिस्से के लिए कानून बनाने की शक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार, संविधान के अनुच्छेद 245 और 246 के बावजूद, संसद के पास कानून बनाने की सर्वोच्च शक्ति है। किसी भी संधि या समझौते को लागू करना जो राज्यों की अनन्य विधायी क्षमता का अतिक्रमण भी कर सकता है। कन्वेंशन पर हस्ताक्षर करने और पुष्टि करने के अनुच्छेद 73 के तहत कार्यकारी कार्रवाई हो सकती है

जब संसद द्वारा अनुच्छेद 253 के तहत कानून पारित किया जाता है तो राज्य के अधिकार के किसी भी उल्लंघन के बिना लागू किया जाता है। पुलिस और जेल राज्य के विषय हैं। संयुक्त राष्ट्र समझौते के अनुसमर्थन के लिए संविधान के अनुच्छेद 253 के तहत कानूनों को लागू करने की आवश्यकता होगी, क्योंकि केवल अनुसमर्थन के लिए

42 42 (2008) 1 एससी 719 डी. आर.

अश्विनी कुमार बनाम। भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

मौजूदा कानूनों को प्रभावित और पूर्ववत नहीं करता है या नए कानूनों के अधिनियमन में परिणाम नहीं देता है। अनुसमर्थन, जैसा कि सर्वविदित है, एक राजनीतिक कार्य है और इसके लिए राज्य सरकारों/केंद्र शासित प्रदेशों के साथ परामर्श और भारत संघ द्वारा उनकी टिप्पणियों पर बाद में विचार-विमर्श की आवश्यकता होगी। भारत संघ ने बताया है कि उन्हें संयुक्त राष्ट्र समझौते के अनुच्छेद 20 पर आपत्ति है। संधियों के कानून पर वियना कन्वेंशन, 1969 का भी संदर्भ दिया गया है, जिसमें भारत एक पक्ष नहीं है, लेकिन विदेश मंत्रालय द्वारा जारी ज्ञापन के संबंध में मानक संचालन प्रक्रिया में कौन से प्रावधान परिलक्षित होते हैं।

विदेशों के साथ समझ/समझौता। मानक

संचालन प्रक्रिया, खंड (iv) शीर्षक डी-संधि बनाने की औपचारिकताओं के तहत जो अनुसमर्थन से संबंधित है, कहता है कि जहां कोई संधि केवल अपने हस्ताक्षर पर लागू होने का प्रावधान नहीं करती है और इसे अनुसमर्थन के अधीन बनाती है, तो संधि को अनुसमर्थन की आवश्यकता होती है। यह सुनिश्चित करने के लिए कि भारत संधियों/समझौतों से उत्पन्न होने वाले सभी दायित्वों का कुशलतापूर्वक निर्वहन करने की स्थिति में है, इस तरह का अनुसमर्थन प्रासंगिक घरेलू खंडों में संशोधन और सक्षम बनाने के बाद ही किया जाना चाहिए। जब इस विषय पर घरेलू कानून का अभाव हो तो कानून बनाए जाते हैं। इस मुद्दे पर कि संधि बनाने की शक्ति एक राजनीतिक कार्य है, निम्नलिखित निर्णयों का संदर्भ दिया गया है: भारत संघ और एक अन्य v. आज़ादी बचाओ आंदोलन और एक और ^ 3; रोज़िलिन जॉर्ज बनाम। भारत संघ और अन्य; साक्षी बनाम। भारत संघ और अन्य 45; और पी. बी. सामंत और अन्य बनाम भारत संघ और अन्य "।

35. हालाँकि, यह कहने के लिए नहीं है कि अदालतें मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए, आवश्यकता पड़ने पर, हस्तक्षेप नहीं करेंगी। यह निर्विवाद है कि

एक लोकतांत्रिक राज्य में जीवन का अधिकार और स्वतंत्रता का अधिकार सबसे महत्वपूर्ण है और इसलिए, किसी भी प्रकार की यातना जीवन के अधिकार का उल्लंघन करेगी और संविधान के अनुच्छेद 21 द्वारा निषिद्ध है। इस तरह की कार्रवाई अनुच्छेद 21 के तहत असंवैधानिक होगी और संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत गैर-मनमानेपन की परीक्षा में विफल हो जाएगी। वास्तव में, अदालतें व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा और सुरक्षा में सबसे आगे रही हैं। 1982 में, एक पत्रकार द्वारा लिखे गए एक पत्र के आधार पर पुलिस लॉक-अप में महिला कैदियों को हुई हिरासत हिंसा की शिकायत की गई थी।

बॉम्बे शहर, शीला बारसे बनाम में यह न्यायालय। महाराष्ट्र राज्य 7

43 (2004) 10 एससीसी 1

44 (1994) 2 एससीसी 80

46 ए. आई. आर. 1994 बम 323 47 7 (1983) 2 एससीसी 96 [2019] 12 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

गिरफ्तार व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा के लिए दिशा-निर्देश जारी किए थे

महिला कैदियों को संभावित यातना या दुर्व्यवहार से पुलिस लॉक-अप में सुरक्षा प्रदान करने के लिए। जेल में बंद व्यक्ति को मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार है और जेल में उसकी नजरबंदी को कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया द्वारा विनियमित किया जाना चाहिए जो उचित, निष्पक्ष और न्यायपूर्ण होनी चाहिए। यह मामले-दर-मामले के आधार पर मौजूदा कानूनों और सिद्धांतों को लागू करके, स्पष्ट करके और यहां तक कि रचनात्मक रूप से विस्तार करके किया जा सकता है। न्यायपालिका इस तरह से अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए कानून बनाना या कानून बनाना नहीं है, बल्कि संविधान को लागू करना और संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत मौलिक अधिकारों की रक्षा करना है।

36. मानव अधिकार के इस पहलू को फिर से नीलाबती में उजागर किया गया

बेहरा (श्रीमती) उर्फ ललिता बेहरा (उच्चतम न्यायालय कानूनी सहायता समिति के माध्यम से) v. उड़ीसा राज्य और अन्य 48 ने कहा कि दोषियों, कैदियों या विचाराधीन कैदियों को अनुच्छेद 21 के तहत उनके मौलिक अधिकारों से वंचित नहीं किया जाना चाहिए और केवल ऐसे प्रतिबंध लगाए जा सकते हैं जिनकी कानून द्वारा अनुमति दी गई है। यह सुनिश्चित करना जेल प्राधिकरण और पुलिस की जिम्मेदारी है कि हिरासत में लिया गया व्यक्ति अपने जीवन के अधिकार से वंचित न रहे, भले ही उसकी स्वतंत्रता इस तथ्य से सीमित हो कि वह व्यक्ति कारावास में है। यहाँ तक कि सीमित स्वतंत्रता भी बहुमूल्य है और यह सुनिश्चित करना राज्य का कर्तव्य है कि हिरासत में रखे गए व्यक्ति से भी कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार निपटा जाए। राज्य में

मध्य प्रदेश बनाम. श्यामसुंदर त्रिवेदी और अन्य 49 यह न्यायालय

उन्होंने इस बात पर प्रकाश डाला था कि हिरासत में अपराध के मामलों से निपटने के लिए एक संकीर्ण तकनीकी दृष्टिकोण के बजाय एक संवेदनशील और यथार्थवादी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। द.

अदालत को अपनी शक्तियों के भीतर काम करना चाहिए और जहां तक संभव हो प्रयास करना चाहिए कि कानून का शासन कायम रहे, यह सुनिश्चित करने के लिए कि दोषी भाग न जाए।

37. हम डी. के. में इस न्यायालय के फैसले पर ध्यान देंगे।

बसु (ऊपर) जिसमें अधिकारों/अभिरक्षा यातना के संबंध में निम्नलिखित निर्देश/दिशानिर्देश जारी किए गए थे:

" (1) गिरफ्तारी करने वाले और गिरफ्तार व्यक्ति से पूछताछ करने वाले पुलिस कर्मियों को अपने पदनाम के साथ सटीक, दृश्यमान और स्पष्ट पहचान और नाम का टैग रखना चाहिए। ऐसे सभी पुलिस कर्मियों का विवरण जो संभालते हैं

गिरफ्तार व्यक्ति से पूछताछ एक रजिस्टर में दर्ज की जानी चाहिए।

(2)

कि गिरफ्तार व्यक्ति की गिरफ्तारी करने वाला पुलिस अधिकारी गिरफ्तारी के समय गिरफ्तारी का ज्ञापन तैयार करेगा और

48 (1993) 2 एस. सी. सी. 746 49 49 (1995) 4 एस. सी. सी. 262 वाणी कुमार बनाम।

भारत और एक अन्य का संघ [संजीव खन्ना, जे.]

जितनी जल्दी हो सके सूचित किया जाता है कि उसे गिरफ्तार कर लिया गया है और उसे विशेष स्थान पर हिरासत में लिया जा रहा है, जब तक कि गिरफ्तारी के ज्ञापन का सत्यापित करने वाला गवाह स्वयं गिरफ्तार व्यक्ति का ऐसा मित्र या रिश्तेदार न हो। गिरफ्तारी के समय, स्थान और हिरासत के स्थान को पुलिस द्वारा सूचित किया जाना चाहिए जहां अगला दोस्त या

गिरफ्तार व्यक्ति का रिश्तेदार जिले में कानूनी सहायता संगठन के माध्यम से जिले या शहर से बाहर रहता है और

गिरफ्तारी के बाद 8 से 12 घंटे की अवधि के भीतर संबंधित क्षेत्र के पुलिस स्टेशन को तार से भेज दिया गया। गिरफ्तार व्यक्ति को इस अधिकार के बारे में जागरूक किया जाना चाहिए कि जैसे ही उसे गिरफ्तार किया जाता है या हिरासत में लिया जाता है, किसी को उसकी गिरफ्तारी या हिरासत के बारे में सूचित किया जाए।

हिरासत के स्थान पर उस व्यक्ति की गिरफ्तारी के संबंध में डायरी में एक प्रविष्टि की जानी चाहिए जिसमें गिरफ्तारी के बारे में सूचित किए गए व्यक्ति के अगले मित्र का नाम और उन पुलिस अधिकारियों के नाम और विवरण का भी खुलासा किया जाना चाहिए जिनकी हिरासत में गिरफ्तार व्यक्ति है।

गिरफ्तार व्यक्ति, जहाँ वह अनुरोध करता है, उसकी गिरफ्तारी के समय भी जाँच की जानी चाहिए और उसके शरीर पर यदि कोई बड़ी और मामूली चोटें मौजूद हैं, तो उस समय दर्ज की जानी चाहिए। द.

" निरीक्षण ज्ञापन "पर गिरफ्तारी को प्रभावित करने वाले गिरफ्तार व्यक्ति और पुलिस अधिकारी दोनों द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिए और इसकी प्रति गिरफ्तार व्यक्ति को प्रदान की जानी चाहिए।

गिरफ्तार व्यक्ति की हिरासत के दौरान हर 48 घंटे में एक प्रशिक्षित डॉक्टर द्वारा चिकित्सा जांच की जानी चाहिए, जो निदेशक, संबंधित [2019] 12 एस. सी. आर. की स्वास्थ्य सेवाओं द्वारा नियुक्त अनुमोदित डॉक्टरों के पैनल में एक डॉक्टर द्वारा की जानी चाहिए।

राज्य या केंद्र शासित प्रदेश। निदेशक, स्वास्थ्य सेवा को सभी तहसीलों और जिलों के लिए भी इस तरह का दंड तैयार करना चाहिए।

(9)

गिरफ्तारी ज्ञापन सहित सभी दस्तावेजों की प्रतियां,

ऊपर निर्दिष्ट, इलाका मजिस्ट्रेट को भेजा जाना चाहिए अपने रिकॉर्ड के लिए।

(10) गिरफ्तार व्यक्ति को पूछताछ के दौरान अपने वकील से मिलने की अनुमति दी जा सकती है, हालांकि पूरी पूछताछ के दौरान नहीं।

(11) सभी जिला और राज्य मुख्यालयों में एक पुलिस नियंत्रण कक्ष उपलब्ध कराया जाना चाहिए, जहां गिरफ्तारी और गिरफ्तार व्यक्ति की हिरासत के स्थान के बारे में जानकारी दी जाएगी।

गिरफ्तारी का कारण बनने वाले अधिकारी द्वारा सूचित किया गया, गिरफ्तारी के 12 घंटे के भीतर और पुलिस नियंत्रण कक्ष में इसे एक विशिष्ट नोटिस बोर्ड पर प्रदर्शित किया जाना चाहिए।"

38. इस संबंध में कानून आई. पी. सी. की धारा 330 और 331 में भी निर्धारित किया गया है जो 'स्वेच्छा से जबरन वसूली के लिए चोट पहुँचाने' से संबंधित है।

39. उपरोक्त आदेशों के संदर्भ में, लोक सेवकों के यातनापूर्ण कृत्यों द्वारा नुकसान के लिए निजी कानून में दावों के अलावा सार्वजनिक उपचार के रूप में जीवन और स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार से असंवैधानिक रूप से वंचित होने के लिए मुआवजा प्रदान करने के लिए कानूनी न्यायशास्त्र विकसित हुआ है। डी. के. बसु (ऊपर) में मुआवजे के पुरस्कार के लिए सार्वजनिक कानून के उपाय को अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत अक्षम्य अधिकारों से उत्पन्न होने के रूप में स्पष्ट किया गया था और इस आधार पर उचित ठहराया गया था कि सार्वजनिक कानून का उद्देश्य न केवल सार्वजनिक शक्ति को सभ्य बनाना है, बल्कि यह भी सुनिश्चित करना है कि नागरिक एक ऐसी कानूनी प्रणाली के तहत रहते हैं जहां उनके अधिकारों और हितों की रक्षा और संरक्षण किया जाता है। मुआवजे के अनुदान के लिए, इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 32 या 226 के तहत कार्यवाही का उल्लंघन करने पर विचार किया जाता है अनुच्छेद 21 के तहत दिए गए मौलिक अधिकारों की स्थापना की गई है। ऐसे मामलों में, एक नागरिक के दावों का मुकदमा सख्त दायित्व के सिद्धांत पर किया जाता है जहां संप्रभुता की रक्षा उपलब्ध नहीं हो सकती है। एस. नांबी नारायणन बनाम। सिबी मैथ्यूज और अन्य 50 जहां नांबी नारायणन के खिलाफ आपराधिक कार्यवाही शुरू की गई थी, लेकिन यह पाया गया कि अभियोजन पक्ष की कहानी एक दिखावा थी, रुपये का मुआवजा। 50 उसे हुई चिंता और दुर्व्यवहार के लिए लाखों का पुरस्कार दिया गया।

50 (2018) 10 एससीसी 804 डी. आर.

40. हमें यह देखने में कोई संकोच नहीं है कि इसके बावजूद

डी. के. बसु (ऊपर) में उपरोक्त निर्देश और पृथ्वीपाल सिंह और अन्य बनाम में निर्धारित कानून के सिद्धांत। पंजाब राज्य और अन्य $1 और एस. नंबी नारायणन (ऊपर), यह न्यायालय, एक उपयुक्त मामले में और उसके समक्ष दलीलों और तथ्यात्मक मैट्रिक्स के आधार पर, डी. के. बसु (ऊपर) और अन्य मामलों में जारी निर्देशों को स्पष्ट करने, जोड़ने और सुधार करने के लिए उचित दिशानिर्देश/निर्देश जारी कर सकता है जब पैरा 27 में उल्लिखित शर्तें संतुष्ट हो जाती हैं। हालाँकि, यह वह नहीं है जो आवेदक द्वारा आग्रह और प्रार्थना की जाती है। आवेदक का तर्क है कि इस न्यायालय को विधायिका, यानी संसद को एक अधिनियम बनाने का निर्देश देना चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के आधार पर उपयुक्त स्वतंत्र व्यापक कानून और यह निर्देश, यदि जारी किया जाता है, तो यह भारत के संविधान के अनुरूप होगा। उपरोक्त चर्चा के आलोक में इस प्रार्थना को अस्वीकार किया जाना चाहिए।

41. आवेदक द्वारा की गई प्रार्थना की अस्वीकृति के बावजूद, हम उपरोक्त चर्चा के संदर्भ में स्पष्ट करेंगे कि यह नहीं होगा

किसी भी तरह से व्यक्तिगत मामलों से निपटने के लिए अदालतों के अधिकार क्षेत्र को प्रभावित करता है

अभिरक्षा में कथित यातना देना और कानून के अनुसार उचित आदेश और निर्देश देना।

देविका गुजराल

ए

म. ए. निपटाया गया।